

ने की खोज

विश्वविद्यालय

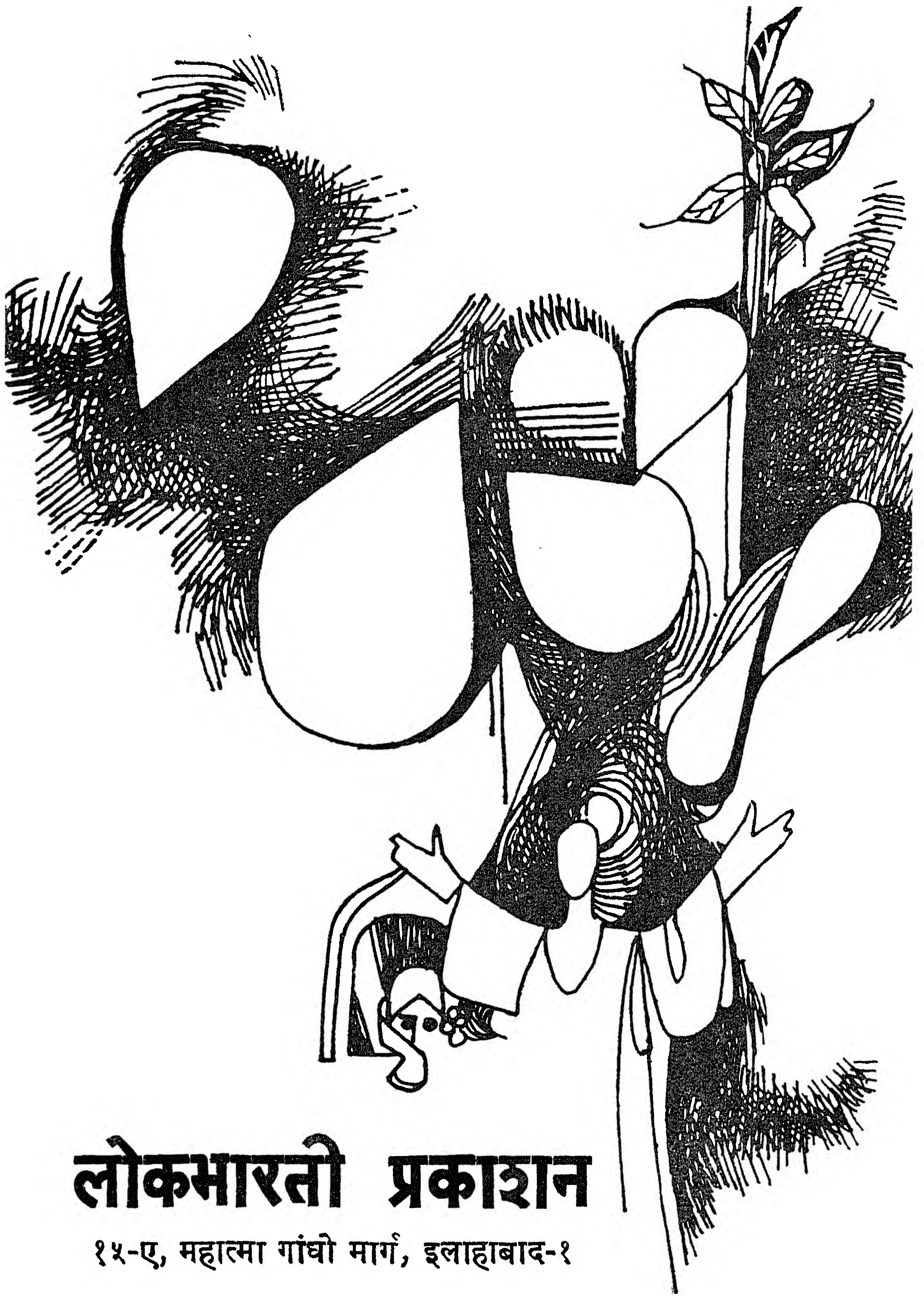
८१२.
विपि खो

हिन्दुस्तानी एकेडेमी, पुस्तकालय
इलाहाबाद

वर्ग संख्या.....८१२.८.....
पुस्तक संख्या.....विपि / खो.....
क्रम संख्या.....१०५२५६.....६५२६.....

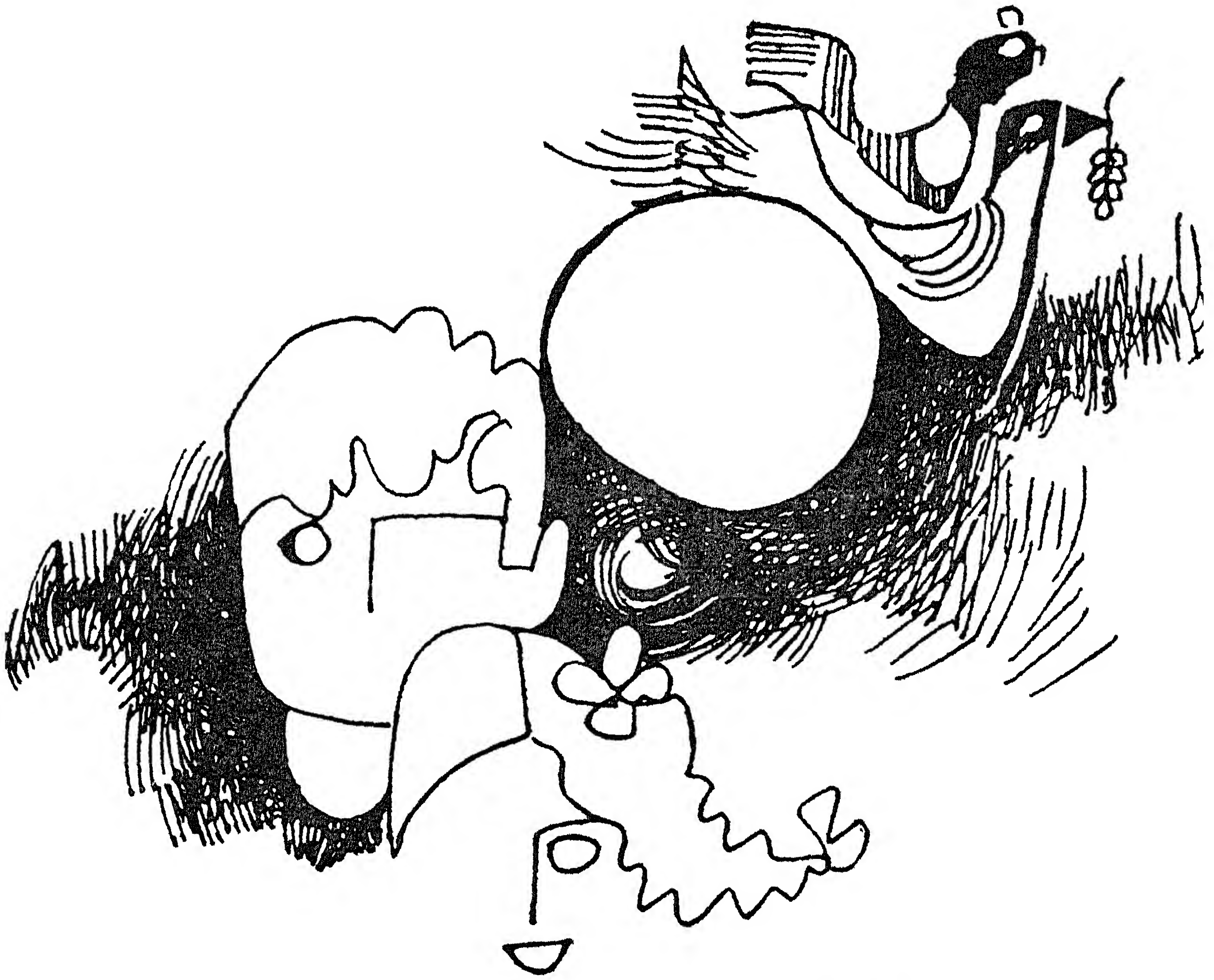
खोए हुए आदमी की खोज

(नाटक-संग्रह)



लोकभारती प्रकाशन

१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-१



खोर हुर आदमी की खोज

विपिन कुमार अग्रवाल

लोकभारती प्रकाशन
१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग,
इलाहाबाद-१ द्वारा प्रकाशित

●
© विपिन कुमार अप्रवाल

● मूल्य : १४.००

● प्रथम संस्करण
२६ जनवरी, १९८०

●
लोकभारती प्रेस
१८, महात्मा गांधी मार्ग
इलाहाबाद-१ द्वारा मुद्रित

बीस साल पहले के
लक्ष्मीकांत को

नये नाटक



कविता, उपन्यास और नाटक भाषा पर आधारित कला विधाएँ हैं। तीनों का गहरा संबंध हमारे जीवन से है, क्यों कि उससे कट जाने पर कवि, कहानीकार और नाटककार, तीनों ही अप्रासंगिक हो जाते हैं, बेकार लगते हैं। इनमें अन्तर विषयगत नहीं है, क्यों कि एक ही समय में, प्रायः तीनों विधाओं में, एक ही प्रकार के विषय पर रचनाएँ पैदा हो जाती हैं। अतः मुख्य अन्तर बनावट का है, ढंग का है, और इस्तेमाल में लायी गयी इकाइयों का है। कविता में बिम्ब प्रधान हो जाता है, उपन्यास में विवरण, और नाटक में मुठभेड़।

नाटक में मुठभेड़ विशेष प्रकार की होती है। लकीरी समय में जीवन की गुत्थी सुलझती रहती है। उपयोग में लायी गयी भाषा समय के साथ बदलती रहती है। गाँवों में, कस्बों में, शहरों में अभिनेता बनने की चाह लोगों में पलती रहती है। और नाटक देखने का मन किसका नहीं होता? जीवन, भाषा, अभिनेता और दर्शक की मुठभेड़ रंगमंच पर होती है। साधारण फार्मूला नाटक में इन चारों का स्थैतिक मिलन मात्र होता है। सही अर्थ में नाटक तभी पैदा होता है जब इनका एक गतिज आपसी संघर्ष मंच पर पनपता है। नाटककार जब इस संभावना के प्रति सजग हो कर रचना करता है तभी वह विधा का वास्तविक उपयोग करता है। अन्यथा कहानी कहने के लिए, या सपना बताने के लिए, विधा का दुरुपयोग।

हर नाटक में एक से अधिक अवसर आ सकते हैं जब ऐसी सृजनात्मक मुठभेड़ पनप जाए। ऐसी मुठभेड़ों के सिलसिले मिल कर एक सर्वथा नयी मुठभेड़ को आकार दे सकते हैं।

मुठभेड़ होने के नाते यह जरूरी है कि हर भाग लेने वाली इकाई ठोस और असली हो। अन्यथा, टक्कर में आते ही उसकी अपनी ओढ़ी हुई खाल उधड़ जाएगी और अन्दरूनी खोखलापन टूट-फूटकर सामने बिखर जाएगा। कुल मिलाकर नाटक बनने से रह जाएगा। अतः नाटककार का काम बहुत मुश्किल है। कवि और कहानीकार के कार्य से भिन्न है।

कवि जब कहानी लिखने चलता है तब उन्हीं शब्दों में आसानी से चमत्कार पैदा कर लेता है जो कविता में काम आते थे। उसके लिए भाषा एक वर्दी का काम करने लगती है जिसमें लैस हो विचार सहसा गुरु-गंभीर और व्यस्त लगने लगते हैं। प्रायः ऐसे सृजनकार भी लेखक की वर्दी सलीके से पहने हुए यहाँ-वहाँ घूमते दीखते हैं। नाटककार हर प्रकार की वर्दी के खिलाफ होता है। अतः अकसर उसे लेखक लेखक नहीं मानते।

वर्दी असली आदमी को एक भूमिका अदा करने के लिए माफिक बना देती है। हमारा बहुत-सा जीवन इस तरह से माफिक बनते जाना है। वर्दी अपने अनुसार एक सीमित शब्दावली का जाल अपने चारों ओर बुन लेती है और उसे ही सम्प्रेषण की सीमा मान लेती है।

नाटककार वर्दी के पीछे दबे असली आदमी को पात्र के रूप में चुनता है जो मुठभेड़ में ठहर सके। वह परिचित सांस्थानिक भाषा के उपयोगों के बीच में सहज क्षणों में बोली जाने वाली भाषा को ढूँढ़ कर लाता है जो व्यक्तिगत सच को मुठभेड़ के फव्वारे के ऊपर गेंद सा टिका सके तथा नाटककार अभिनेता को मजबूर करता है कि वह बँधी-बँधायी हरकत को त्याग कर आदिम परम्परागत मुद्राओं से जुड़ सके। सही अर्थ में दर्शक को यदि मुठभेड़ में हिस्सा लेना है तो उसे भी चौंका कर, उसकी बनी-बनाई देखने-सुनने की जड़ स्थिति से बाहर निकाल कर, सीधे साक्षात्कार के लिए तैयार करना है। यह समझ इधर विकसित हुई है और इससे उपजी परिपक्वता के उदाहरण आज के आधुनिक नाटक में मिलते हैं।

(६)

प्रस्तुत नाटकों की रचना में मुझे मुख्यतः एक ऐसी भाषा की खोज के लिए जाना पड़ा जो 'वर्दी' से दूर हो और 'मुठभेड़' के लायक हो । मुठभेड़ की आँच में तप कर जो बचा रहे वह फिर मेरे और सब के कहीं और काम आ सके ।



अनुक्रम



मौत एक कुत्ते की	...	१
अभिव्यक्ति	१७
राष्ट्रसम्राट	२६
अपने देश में	...	५५
खोए हुए आदमी की खोज	...	६८

मौत एक कुत्ते की [एक ध्वनि नाटक]

पुरुष : राजू, राजू !.....कहाँ चला गया, जब जल्दी है तब.....
(राजू के दौड़ कर आने की आवाज़ ।)

राजू : (१३ वर्ष के बच्चे की आवाज़) क्या है पिताजी ?

पुरुष : पिताजी के बच्चे, बोतल में पानी भर लिया कि नहीं ?

राजू : माँ से पूछ कर आता हूँ । (राजू के दौड़ कर जाने की आवाज़ ।)

पुरुष : माँ से पूछ कर आता हूँ । माँ नहीं कहेंगी तो क्या बोतल में पानी भी नहीं भरा जाएगा ! समझ में नहीं आता इस घर का हाल । इससे तो सराय अच्छी है, सराय ! (ऊँचे स्वर में) रामकृपाल, रामकृपाल.....

रामकृपाल : (अन्दर से आती हुई आवाज़) जी आया.....

पुरुष : अरे, सामान ले कर आ, गाड़ी का समय हो रहा है.....
(टीन का बक्स फ़र्श पर खींच कर लाने की आवाज़ ।)

अरे, बक्स टूट जाएगा कि नहीं.....सारे फ़र्श पर खरोंच पड़ गये.....मेरी समझ में नहीं आता रामकृपाल.....

रामकृपाल : जी, बहू जी ने कहा था कि भारी है खींच कर.....
(बक्स को खींचने की आवाज़ ।)

पुरुष : ठहरो, मैं पकड़वाता हूँ । (भारी बक्स को उठा कर चलने के कदमों की आवाज़) यह बक्स इतना भारी कैसे हुआ ?

रामकृपाल : बहू जी से पूछ कर आता हूँ....(जाने की आवाज़ ।)

पुरुष : माँ से पूछने राजू गया, अन्दर बैठ गया, बहू जी से पूछने रामकृपाल गया, वह भी बैठ जाएगा, सामान बाहर पड़ा है, मैं अन्दर जा नहीं सकता....यह भी अजब देश है, यहाँ औरतों से बिना पूछे कुछ काम ही नहीं होता....

(साइकिल की घंटी बजने की आवाज़ पास आती है ! दूधवाला पास आकर साइकिल से उतरता है तो हैंडिल पर लटके दूध के बर्तन खड़खड़ा उठते हैं । फाटक खोल कर साइकिल अन्दर लाने की आवाज़ ।)

दूधवाला : नमस्ते बाबू जी ! (सीटी बजाता है ।)

पुरुष : कहो, आज दूध में कितना पानी मिलाया है ?

दूधवाला : आप भी ऐसा कहने लग गये, बाबू जी !

पुरुष : जो सच बात है वह तो कही ही जाएगी ।

दूधवाला : हम लोग सच कहाँ बोल पाते हैं, बाबू जी । यह सहूलियत तो बड़े लोगों को ही है ।

पुरुष : क्या मतलब ?

दूधवाला : बाबू जी, (सीटी बजाता है) सच तो अब कहीं रहा नहीं । अब यही लीजिए, पानी न मिलाएँ तो भी यही कहा जाएगा कि साले ने मिलाया है, और न मिलाएँ तो भी । इसलिए....

पुरुष : इसलिए मिला ही लें, है न !

दूधवाला : हाँ, बाबू जी, जिससे जब आप कहें तब वह तो सच हो, नहीं तो सुबह सुबह से ही आपका कहा झूठा पड़ जाएगा, फिर दिन भर.....

पुरुष : अच्छा, अच्छा, रहने दे अपनी बातें । तेरा बाप जब आता था तो चुपचाप दूध दे कर चला जाता था..... सीटी कोई नहीं सुनेगा.....आवाज़ लगा लो । तुम्हारा बाप.....

दूधवाला : (चिल्ला कर) दूध ले लीजिए !.....बाबू जी ज़माना बड़ा खराब आ गया है ।

(रामकृपाल के आने की, बर्तन रखने की आवाज़ । 'एक किलो दे दो' । बर्तन से दूध नाप कर दूध उड़ेलने की आवाज़ ।)

पुरुष : हाँ आँ आँ.....

दूधवाला : ठीक चारा मिलता नहीं.....(लटके बर्तन खड़कने की, साइकिल जाने की, फाटक खुलने की, दूर जाने की, साइकिल की घंटी बजने की आवाज़ ।)

स्त्री : कहाँ चले गये,....सुनते हो जी ।

पुरुष : क्या चलना नहीं है.....सब तुम्हारे कहने से चलते हैं, एक रेल बची है, किसी दिन वह भी बिचारी.....

स्त्री : इस घर में मेरी चलती होती तो क्या यही हालत होती ।

पुरुष : क्या खराबी है यहाँ ?

स्त्री : तुम्हें तो घर की बातों से कुछ वास्ता नहीं रहता । तुम, तुम्हारे दोस्त और तुम्हारी किताबें.....लो, अपना चश्मा लगा लो ।

पुरुष : आखिर हुआ क्या ?

स्त्री : होता क्या, तुम्हारी नाक के नीचे मरा दूधवाला

पानी दे गया और तुम बैठे देखते रहे, बोले भी नहीं ।
मेरे मायके में रामलाल ऐसा दूध दे जाता तो मेरे
पिता जी उसकी मूँछें उखाड़ लेते, मूँछें !

पुरुष : पहली बात, मैं चुप नहीं बैठा रहा । दूसरे, यह गाँव
नहीं शहर है । तीसरे, मैं तुम्हारा पिता जी नहीं हूँ ।
चौथे, हमारे दूधवाले के मूँछें नहीं हैं....

स्त्री : तुमसे कौन बहस करे, बहस में पड़ गये तो गाड़ी भी
निकल जाएगी ।

(रामकृपाल एक और टीन का बक्सा
खींचता हुआ लाता है ।)

पुरुष : यह क्या है ?

स्त्री : पड़ोस में टिल्लू की अम्माँ हैं न, दो दिन पहले उनका
भाई आया था, बिचारा यह बक्सा ले जाना भूल
गया । कानपुर पर मिलने आएगा तो उसे दे देंगे ।

(बक्सा खींचने की आवाज़ ।)

पुरुष : टिल्लू की माँ का भाई इतना बड़ा बक्सा ले जाना
भूल गया ! आदमी था कि घनचक्कर ? मैं पूछता हूँ....

स्त्री : तुम तो सबको झूठा समझते हो । क्या कोई भला
आदमी बड़ी चीज़ नहीं भूल जा सकता । क्या तुम्हीं
नहीं भूल जाते कि घर पर मैं भी हूँ, बस अपने काम
में लगे रहते हो ।

पुरुष : अच्छा मैं ही झूठा हूँ, सब ग़लती मेरी ही है, (बक्सा
खींचने की आवाज़) पर इतना सामान मेरी मोटर में
चढ़ेगा कैसे ?

(राजू के दौड़ कर आने की आवाज़ ।)

राजू : लो, पानी भर लाया, माँ अब चलें !

स्त्री : हाँ बेटा, ज़रा तेरे टीका लगा दूँ, ले, इधर आ....

पुरुष : यह टीका किस बात का ?

स्त्री : राजू मामा की बारात के लिए जा रहा है, दस विघ्न आते हैं । रास्ते में....

पुरुष : यह सब पुराने ज़माने की बातें हैं, जब लोग बैलगाड़ी से चला करते थे, रास्ते में आँधी आती थी, पानी आता था, डाकू आते थे....और आज....और आज राजू यहाँ से मोटर पर चढ़ कर स्टेशन जाएगा, वहाँ से रेल पर चढ़ कर....

स्त्री : कल ही तो अखबार में निकला है कि फैज़ाबाद के पास एक मोटर और एक बस रोक कर लूट ली गयी, और बिहार में बाढ़ में पटरियाँ डूब जाने के कारण रेलें चलना बन्द हो गयीं, किसने बचा लिया जो मैं टीका न लगाऊँ । तुम्हारी मोटर कोई देवता का रूप है क्या ? जब से मरी आयी है खर्चा और बढ़ गया ! सगुन के समय टोक देते हो बस । इधर आ राजू !

(मोटर पर सामान रखने की और दर-वाज़ा खोल कर लोगों के बैठने की आवाज़ें ।)

पुरुष : रामकृपाल, ज़रा हैन्डिल लगा लो, बैटरी कमज़ोर है ।

(मोटर में हैन्डिल लगाने की आवाज़ ।)

कल शाम चली नहीं, इंजन ठंडा है । हैन्डिल निकाल लो, अन्दर से चलाता हूँ ।

स्त्री : सुनते हो जी ! (सेल्फ़ चलने की आवाज़) कल मुन्ने की माँ अपने मायके गयीं (सेल्फ़ की आवाज़) तो चाभी का गुच्छा (सेल्फ़ चलने की आवाज़ जैसे बैटरी डाउन हो रही हो) भूल गयीं, उनका बड़ा लड़का....

पुरुष : जब मैं गाड़ी चालू करने लगता हूँ तुम बोल देती हो ।

तभी नहीं चली। अब ऐसे नहीं चलेगी, धक्का लगाना होगा। एक आदमी को बुला लो, रामकृपाल !

रामकृपाल : साहब, दूधवाला मुहल्ले में दूध बाँट कर लौट रहा है, उसे रोक लूँ।

पुरुष : हाँ, हाँ, रोक लो !

(साइकिल की पास आती घण्टी की आवाज़। रामकृपाल : 'रुकना दूधवाले'। बर्तनों के खड़कने की और साइकिल के रुकने की आवाज़।)

दूधवाला : क्या हुआ, बाबूजी !

रामकृपाल : गाड़ी चल नहीं रही है, ज़रा धक्का लगा दो।

दूधवाला : अरे, यह तो बिलायती गाड़ी है न बाबू जी ! लगता है पेटरोल में पानी मिला दिया है। कम्पनी वाले भी बड़े बदमाश होते हैं !

(ज़ोर लगाने की आवाज़, गियर लगने की आवाज़, इंजन चलने की आवाज़, रामकृपाल के दौड़ कर दरवाज़ा खोल कर चढ़ने की आवाज़। अब से मोटर के इंजन की आवाज़ बराबर आती रहती है, ऊपर से सड़क पर चलनेवाली साइकिलों, रिक्शों, इक्कों, ताँगों, ठेलों, ट्रकों आदि अन्य गाड़ियों की आवाज़ें भी बीच-बीच में, कभी अलग-अलग, कभी साथ-साथ, आती रहती हैं।)

पुरुष : चलो चालू तो हो गयी, इसलिए मैं रेल के वक्त से दो घण्टा पहले घर से चल देता हूँ.... (ब्रेक लगने की कई आवाज़ें) देखो, बैलगाड़ी बीच में ला कर फँसा दी,

स्कूटर भिड़ते भिड़ते बचा । जितनी तरह के लोग,
उतनी तरह की सवारियाँ । रफ़्तार आये तो कैसे ?
(हार्न बजाने की आवाज़ें) यहाँ कोई दूसरे की सुनता भी
तो नहीं । जैसे सड़क इन्हीं के बाप की हो....(इंजन तेज़
होने की आवाज़ ।)

स्त्री : धीरे चलो न, राजू बैठा है, कुछ हो जाए....

राजू : धीरे करिए पिताजी, आगे गतिरोध आ रहा है....

(ब्रेक लगने की आवाज़ ।)

पुरुष : जहाँ देखो वहाँ सड़क पर पहाड़ बना दिये हैं । कहीं
कहीं सड़क इतनी उठा दी है कि गाड़ी अटक जाए ।
कल ही मेहता साहब की स्टैन्डर्ड बीच में अटक गयी,
वह तो कहो गाड़ी हल्की थी....

राजू : मेरे स्कूल के सामने भी गतिरोध बने हैं । कोई गाड़ी
अटक जाती है तो बड़ा मज़ा आता है । (ताली बजाता
है ।)

पुरुष : जहाँ जहाँ विद्यार्थी हैं वहाँ वहाँ गतिरोध है, पढ़ना-
लिखना कुछ नहीं ।

स्त्री : राजू अब की से फ़र्स्ट आया है ।

राजू : पिताजी, आपके दोस्त जा रहे हैं ।

पुरुष : अरे हाँ, यह तो सालिग्राम जी हैं, लगता है रिक्शा
नहीं मिली, कचहरी जा रहे हैं, पैदल कब तक पहुँचेंगे
....सुनती हो, इन्हें बैठाल लें ?

स्त्री : बैठाल लो, मुझे क्या !

पुरुष : (मोटर रुकने की आवाज़) सालिग्राम जी, कचहरी जा
रहे हैं क्या ?

सालिग्राम : हाँ, कहिए आपकी सवारी कहाँ चली ?

पुरुष : ज़रा बच्चे आगरा जा रहे हैं, आइए बैठिए, आपको कचहरो पहुँचा दूँ !

सालिग्राम : नहीं, धन्यवाद, पैदल ही चला जाऊँगा, ज़रा जल्दी में हूँ ।

पुरुष : क्या मतलब ? (इंजन रुक जाने की आवाज़ ।)

सालिग्राम : अच्छा चलूँ, नमस्कार !

पुरुष : (दबे स्वर में) नमस्कार ! रामकृपाल, ज़रा हैन्डिल लगाओ ।

(दरवाज़ा खुलने और बन्द होने की, हैन्डिल लगने की आवाज़ ।) नहीं चलेगी अब । अच्छा हुआ यहाँ आ कर फ़ेल हुई । रुस्तम का कारख़ाना दस क़दम पर है । रामकृपाल, चलो धक्का लगा कर पहुँचा दें । राजू, तू भी उतर आ ।

(दरवाज़ा खुलने और बन्द होने की आवाज़ । मोटर को धकेलने की आवाज़ें ।) हाँ, इसी कच्ची सड़क पर मोड़ लो, धीमे से, कूड़े के पीपे के पीछे ही है । (सड़क की आवाज़ें कम हो जाती हैं ।)

रुस्तम : क्या हुआ बाबूजी, इंजन नहीं स्टार्ट हो रहा है क्या ?

पुरुष : (हाँफ़ते हुए) नहीं रुस्तम, पता नहीं क्या हो गया । घर से ठीक चली गाड़ी, बीच में अटक गयी ।

राजू : माँ, तुम भी उतर आओ, देखो, कितनी पुरानी टूटी मोटरें पड़ी हैं ।

रुस्तम : सन्तू, ज़रा एक कुर्सी ले आ ! अभी ठीक करता हूँ बाबूजी ।

(मोटर से उतरने की आवाज़ । टीन की कुर्सी लाकर रखने की आवाज़, मडगार्ड पीट कर सीधा करने की, बौनेट खोलने की, इंजन स्टार्ट हो कर एकदम तेज़ होने की आवाज़ें आने

लगती हैं ।) सन्तू बेटा देख कि बैटरी में चार्ज है कि नहीं, मैं तब तक कारबुरेटर खोलता हूँ । अबे, टर्मिनल ऐसे पेच घुमा-घुमा कर कब तक खोलेगा रे ! रिंच नीचे फँसा कर कुनिया दे, उखड़ आएगा । (रिंच लगाने और उछल कर बानेट से लड़ने की आवाज़) निकल आया न ! ज़रा जीभ से छुआ कर देख करेन्ट है कि नहीं ! है ? अब ज़रा गाड़ी की बाड़ी से छुआ कर देख घर-घराता है कि नहीं ! (स्पाकिंग की आवाज़) बैटरी में तो जान बाक़ी है बाबूजी, लगता है जेट में कुछ फँस गया । ले बेटा सन्तू, जेट में ज़रा फूँक तो दे ! (फूँकने की आवाज़) ऐसे न सफ़ा होए तो एक तार घुसेड़ दे ।

पुरुष : लेकिन रुस्तम, अभी मैं अपने आप मोटर बनाने की एक किताब पढ़ रहा था, उसमें तो लिखा था कि जेट में तार नहीं डालना चाहिए ।

सन्तू : (हँसने की आवाज़ ।)

रुस्तम : क्यों हँसता है बे, काम कर ! अरे, बाबूजी, किताब से दुनिया चले लगे तो हम लोग क्या करेंगे । किताब लिखनेवाले करना जानते होते तो काहे लिखते, करते न, आप ही बताइए, बाबूजी !

पुरुष : लेकिन जिसने लिखा उसने और किताबें पढ़ कर ही तो लिखा होगा । और फिर वह अंग्रेजी में थी ।

रुस्तम : हम लोग साहब किताब पढ़ कर नहीं बनाते और अंग्रेजी की गिटिर पिटिर से तो देश का सत्यानाश हो गया है । एक हम लोगों के बूते पर मोटरें चल रहीं हैं (कहीं इंजन स्टार्ट हो कर तेज़ कम करने की आवाज़) वहाँ भी घुस आयी तो यह भी चलना बन्द हो जाएगी । कहाँ गया सन्तू, अबे मोटर के नीचे क्या लेटा है ?

सन्तू : (नीचे से आवाज़) सेल्फ़ का तार कस रहा हूँ, ढीला लग रहा है ।

रुस्तम : दाँत से रबर छील कर फेंक दे और कस दे ।

(रबर थूकने की आवाज़ । रिन्च की आवाज़ ।)

पुरुष : यह तो पुरानी विलायती गाड़ी है पर अब तंग कर रही है । अब तक ठीक चली ।

रुस्तम : बाबूजी, पारट मिलते नहीं । अब तो आधी विलायती रह गयी है, आधी देसी हो गयी है । इसलिए और मुश्किल है । हाँ बाबूजी, अब चलाएँ !

(सेल्फ़ की आवाज़, इंजन चलने की आवाज़, दरवाज़ा खोल-खोल कर लोगों के बैठने की आवाज़, मोटर पीछे जाने की आवाज़, फिर आगे बढ़ कर सड़क पर आ जाने की आवाज़ ।)

पुरुष : मुझे तो लग रहा था कि आज गाड़ी छूट जाएगी ।

राजू : पिता जी, मैं बड़ा हो कर रुस्तम बनूँगा ।

पुरुष : क्यों ?

राजू : तब अंग्रेज़ी रटनी नहीं पड़ेगी । बिना पढ़े मोटरें बनाऊँगा, चलाऊँगा । (ताली पीट कर) कितना मज़ा आएगा ।

(टन् टन् करके रेल का फाटक गिरने की आवाज़ ।)

पुरुष : लो, फाटक बन्द हो गया, अब क्या होगा ।

(हार्न बजाने की आवाज़ । इक्का, रिक्शा, साइकिल, आदि, के आकर रुकने की आवाज़ें ।)

पता नहीं यह लोग यहाँ लाइन पार करने के लिए
ऊपर से पुल क्यों नहीं बनवा देते !

एक स्वर : मन्त्री जी को रुकना पड़े तो कल बन जाए । हमारी
सुविधा-असुविधा को कौन देखता है ।

दूसरा : अभी से बन्द कर दिया, गाड़ी का कहीं पता नहीं है ।
ज़रा हार्न बजाइए साहब, तब सुनेंगे ।

पुरुष : मेरी बैटरी डाउन है ।

तीसरा : मोटरवाले भी डाउन हैं तब हम साइकिलवालों का
क्या होगा !

चौथा : सिगनल कहाँ डाउन है, साहब ।

पुरुष : सिगनल नहीं बैटरी डाउन है !

स्त्री : आप चुप भी रहिए न !

(एक कुत्ते के भूंकने की आवाज़ ।)

एक स्वर : अब गाड़ी आने वाली है ।

दूसरा : दिखलाई तो नहीं दे रही है ?

एक : इससे क्या कुत्ता तो भूंक रहा है ।

दूसरा : क्या बात कही आपने भी साहब !

एक : आपको मेरी बात पर विश्वास नहीं हो रहा है ।

दूसरा : इसमें विश्वास की क्या बात, दोनों में कोई कार्य-
कारण सम्बन्ध नहीं है बस ।

एक : आप नहीं जानते कुत्ते कितने दूरदर्शी होते हैं । जब
यम का आना बता देते हैं तब रेल के इंजन की क्या
बिसात !

दूसरा : वह बात दूसरी है ।

(दूर से रेल के आने की आवाज़ पास
आती है ।)

राजू : रेल आ रही है ।

पुरुष : तो मैं क्या करूँ । पता नहीं अब मेरी गाड़ी स्टार्ट होगी भी कि नहीं ।

स्त्री : चुप रह राजू ।

एक : देखिए जनाब, रेल आ गयी । मालगाड़ी है । अब कुत्ते की बात सच्ची रही या आपकी ?

दूसरा : यह महज़ एक इत्तफ़ाक है ।

(रेल की आवाज़ सिर पर आ जाती है ।

तेज़ी से रेल निकल जाती है । भैंसों की आवाज़ें आती हैं, और उन्हें चरानेवाले की ।)

पुरुष : इतनी सारी भैंसें आ गयीं, अब निकलेंगे कैसे ? इनको सड़कों पर छोड़ क्यों दिया जाता है ?

(भैंसों की आवाज़ें । उन पर डंडे पड़ने की आवाज़ें । टन्-टन् कर फाटक खुलने की आवाज़ें । भोंपू, हार्न, हटना-भाई, निकल जाने दो, इत्यादि के साथ भीड़ के सहसा आगे बढ़ने की आवाज़ें ।)

लो, स्टेशन आ गया । रामकृपाल एक कुली को बुला लो !

रामकृपाल : कुली, ओ कुली ।

(सामान उतारने की, लोगों के उतरने की, आवाज़ें ।)

पुरुष : इतना बड़ा 'क्यू' लगा है, टिकट कैसे मिलेगा ?

स्त्री : लाओ, मैं टिकट ला दूँ, मुझे 'क्यू' में नहीं लगना पड़ेगा ।

(टिकट-खिड़की पर टिकट काटने की मशीन की लगातार छह-सात आवाज़ें ।)

टिकट बाबू : लीजिए साहब, टूँडला के छह टिकट ।

एक स्वर : लेकिन मैंने तो तीन बड़े और छह बच्चों के टिकट माँगे थे ।

टिकट बाबू : बच्चों के टिकट खतम हो गये हैं इसलिए छह बड़े टिकट काट दिये ।

दूसरा : 'क्यू' खिसक क्यों नहीं रहा है ?

तीसरा : आगे वाले साहब तय नहीं कर पा रहे होंगे कि कहाँ जाना है ।

चौथा : कहाँ जाएँ साहब, सब जगह एक ही हाल है ।

पाँचवाँ : यह बात नहीं है, असल में एक टिकट काट कर टिकट बाबू चाय पीने चले जाते हैं ।

स्त्री : डेढ़ टिकट आगरा दे दीजिए ।

(दो बार टिकट काटने की आवाज़ ।)

पुरुष : मिल गये टिकट ?

स्त्री : हाँ । राजू कहाँ गया ?

पुरुष : वह लोग अन्दर गये । चलो पुल पार करना पड़ेगा ।

(सीढ़ी पर चढ़ने की आवाज़ें । दूर से इंजन की आवाज़ें । प्लेटफ़ार्म पर सामान बिकने की, ठेलगाड़ियों पर सामान जाने की, आवाज़ें । मुर्गियों की आवाज़ें ।)

राजू : यह डलियों में बन्द मुर्गियाँ कहाँ जा रही हैं माँ ?

स्त्री : मुझे नहीं मालूम ।

राजू : तो किसे मालूम है ।

स्त्री : पिताजी से पूछो ?

राजू : यह मुर्गियाँ कहाँ जा रही हैं पिता जी ?

पुरुष : राजू तू आइसक्रीम खाएगा ? आइसक्रीमवाले इधर आओ । हाँ, यह दो । लो राजू ।

नारायण : (दूर से बोलते हुए आते हैं) कहिए जनाब, कहाँ जा रहे हैं ?

पुरुष : कहिए नारायण जी, बहुत दिनों बाद दीखे, कहाँ जा रहे हैं ?

नारायण : जा कहीं नहीं रहा हूँ, जीतू को ढूँढ़ने आया हूँ ।

पुरुष : अरे अब तो जीतू बहुत बड़ा हो गया होगा ?

नारायण : जी, मुझसे भी लम्बा हो गया है । आप ही के विश्व-विद्यालय में तो पढ़ता है ।

पुरुष : अच्छा, इतना बड़ा हो गया । मेरी कक्षा में तो नहीं है । क्या विषय लिये हैं उसने ?

नारायण : (हँस कर) अब तो आप लोगों ने ऐसे नियम बना दिये हैं कि हर लड़के को तीन विषय लेने पड़ते हैं ।

पुरुष : ऐसा तो सारी दुनिया में है, ऑक्सफ़ोर्ड, कैम्ब्रिज....

नारायण : ऑक्सफ़ोर्ड, कैम्ब्रिज की बात तो ठीक है पर यहाँ तो विख्यात तीन विषय हैं, सनीमा, हड़ताल और किसी का कहना न मानना ।

पुरुष : वाह नारायण जी, आपकी भी मज़ाक करने की आदत गयी नहीं । (इंजन की सीटी और भाप छोड़ने की आवाज़) यह इंजन ही आते-जाते रहेंगे या रेल भी आएगी ?

नारायण : रेल क्या आएगी, सुना है सुनार बस्ती के फाटक के पास रोक ली गयी है । तभी तो दौड़ा-दौड़ा जीतू को ढूँढ़ता हुआ आया हूँ ।

पुरुष : क्या जीतू भी उसमें शामिल है ?

नारायण : आप पढ़ाते हैं, विद्यार्थियों को ज़्यादा समझते होंगे, पर साहब, मेरी समझ में तो यह सब आता-जाता नहीं । अब जीतू को लीजिए । दिन-रात सनीमा देखना, सनीमा पढ़ना, सनीमा पहनना, सनीमा सोना,

यह कोई ढंग है। वैसे मैं सनीमे के खिलाफ नहीं हूँ, आप मुझे ग़लत न समझें। पर सनीमा देखना एक बात है, उसकी नक़ल करना दूसरी बात। मैं नक़ल के खिलाफ़ हूँ। नक़ल के खिलाफ़ तो आप भी होंगे न, है न, हाँ, हाँ, क्यों नहीं, आजकल परीक्षाओं में जो हो रहा है वह किसे नहीं मालूम। मेरा तो कहना है कि यह देश नक़ल करते-करते नक़ली देश होता जा रहा है। हमें नक़ल के खिलाफ़ जिहाद बोलना पड़ेगा। तस्करी से ज़्यादा नुक़सान नक़ल कर रही है। अंग्रेज़ चले गये, अपनी नक़ल छोड़ गये। वैसे मैं नक़ल के खिलाफ़ नहीं हूँ। हमें अंग्रेज़ों की अच्छी आदतों की नक़ल करनी चाहिए। समय की पाबन्दी में मैं उनका जितना खुद नक़लची हूँ उतना आपको ढूढ़ने पर दूसरा नहीं मिलेगा। लेकिन नक़ल नक़ल में अन्तर होता है। अकल लगा कर नक़ल करना और बात है और.....अरे जीतू जीतू (जीतू के दौड़कर पास आने की आवाज़। गाड़ी आने की घण्टी बजने की आवाज़।) कहाँ था तू ?

जीतू : (हाँफ़ते हुए) आज कालका मेल के ड्राइवर ने.....

नारायण : बेटा, चाचा जी को नमस्कार करो !

जीतू : नमस्ते।

पुरुष : नमस्ते बेटा।

जीतू : मैं सुनार बस्ती के फाटक के पास पहुँचा तो स्टेशन से निकल कर डाउन कालका मेल आ गया और फाटक बन्द हो गया। वहाँ एक कुत्ता रहता है मोती। उसे सब आने-जाने वाली गाड़ियों का पता रहता है। हर गाड़ी के आने के पहले भौंकता है, फिर हट जाता

है । आज उसे न जाने क्या सूझा, पटरी के बीच खड़ा हो कर आती मेल को देख-देख भूँकने लगा । मेल अभी स्टेशन से निकला था इसलिए धीमे था । कुछ लोगों ने दौड़ कर ड्राइवर को रोकने का हाथ दिखाया, उसने कुत्ते को देख भी लिया । चाहता तो आसानी से रोक सकता था । पर उसने रोका नहीं । मोती की कातर चीख ने मुझे पागल कर दिया । तमाम लोग चढ़ गये इंजन पर और गाड़ी रुकवा दी । ड्राइवर को बहुत पीटा । अब मेल लाइन पर खड़ा है । रेलों का आना-जाना बन्द है ।

नारायण : वैसे मैं कुत्तों के खिलाफ नहीं हूँ पर एक कुत्ते के लिए....

जीतू : पापा आज उसने देखते-देखते मासूम कुत्ते को मार दिया क्योंकि उसके पास शक्ति थी, इतनी भारी शक्ति ! कल वह बच्चों पर, हम पर, आप पर, इंजन चढ़ा देगा, तब क्या होगा ? मैं आगे आने वाली बात जान सकता हूँ, उस कुत्ते की तरह....उस कुत्ते की तरह....उस कुत्ते की तरह....मैं....

(आते इंजन की आवाज़ में उसका स्वर डूब जाता है ।)



अभिव्यक्ति

(मंच के सामने के भाग में दोनों ओर आशा कम्पनी के दो भोंपू ऊँचे आधारों पर लगे हुए हैं । बाएँ वाले पर '१' लिखा है और दाएँ वाले पर '२' । पिछली दीवार पर एक बन्द दरवाज़ा है, बाईं दीवार पर एक बन्द खिड़की है जिस पर 'क' लिखा हुआ है, और दाईं दीवार पर वैसी ही एक बन्द खिड़की है जिस पर 'ख' लिखा हुआ है । मंच के पिछले भाग में एक मध्यमायु का व्यक्ति खाट पर पड़ा सो रहा है । एक-दो कुर्सियाँ तथा आल्मारियाँ इधर-उधर रखी हैं । पर्दा खुलने पर ऊपर के रोशन-दान से सूर्य का प्रकाश आकर कमरे की बाईं दीवार पर पड़ता है । एक मुर्गा बोलता है फिर एक गधा । व्यक्ति अंग-ड़ाई लेकर उठता है । बैठ कर चप्पल ढूँढ़ता है । एक चप्पल फ़र्श पर मिल जाती है । उसे पहन कर दूसरी ढूँढ़ता है । बिस्तर उलट-पलट कर देखता है ।

दूसरी चप्पल तकिए के नीचे से निकलती है। उसे हाथ में ले उलट-पलट कर हैरानी से देखता है।)

व्यक्ति : कल गुलदस्ता निकला था आज चप्पल। देखो कल यहाँ से क्या निकलता है ? (तकिया ठीक करके दूसरी चप्पल पहनता है। बिस्तर लपेटते हुए) सपने रात में दीखते हैं, यथार्थ दिन में। बस यही अन्तर है। वैसे पलड़ा बराबर है दोनों का। जब बाईं ओर की दुनिया सपनों में डूबी होती है तो दाईं ओर की यथार्थ में। फिर बाईं ओर की यथार्थ में और दाईं ओर की सपनों में। यथार्थ और सपनों की लट्टू है दुनिया। (मंच के मध्य में आकर सामने देखकर) है न ? (बाहर से मुर्गी और गधों के बोलने की आवाज़ें आती हैं। हर जगह रोशनी बढ़ जाती है। खुश होकर) यथार्थ आ गया, देखा जाए ! (बाईं ओर की खिड़की, जिस पर क लिखा हुआ है, खोलता है। खोलते ही बाईं ओर के भोंपू १ से लड़खड़ाते स्वर में हारमोनियम पर भजन की कुछ पंक्तियाँ आती हैं। व्यक्ति दौड़ कर १ के पास आकर ऊँची गर्दन कर हैरानी से देखता है।)

१ : चें चें...जै...ज ज जय...चें चें...ज ग दी श...जै जग...चें चें चें...हरे हरे जय...रें रें चें चें...जय जगदीश हरे...ऊँ जै ऊँ जै ऊँ जै ऊँ जै (यह आवाज़ निकलती है जैसे पुराना घिसा रिकार्ड अंतिम चक्कर पर घूम रहा हो। व्यक्ति एक चप्पल उतार कर भोंपू के मुँह पर रखता है उसे बन्द करने की नियत से। फिर तकिया लाकर ढँकने की कोशिश करता है। पर आवाज़ आती रहती है। हार कर क को बन्द करता है। तुरन्त आवाज़ बन्द हो जाती है।)

व्यक्ति : (आकर खाट पर बैठ जाता है। सुस्ताता है। कुछ पलों के बाद फिर मुर्गों और गधों की आवाजें आती हैं। चौकन्ना होकर) कल कुछ और बज रहा था, आज कुछ और। सपने की तरह यथार्थ भी कुछ-कुछ बदलता रहता है। न बदले तो पता कैसे चले कि आज कल नहीं है। (पाटी पर हाथ मार कर) बिल्कुल ठीक ! (उठ कर दाईं ओर की खिड़की ख खोलता है। तुरन्त भोंपू २ से किसी नेता के भाषण की लड़खड़ाती आवाजें आती हैं।)

२ : भा.....भा.....चीं चीं.....भाइयों तथा.....ब ब ब ह नों.....
चीं चीं चीं.....बहनों तथा भाई.....बहन तथा भाइयों.....
चीं चीं.....बहन भाई.....न भाई.....न बहन बहन बहन.....
हमारा देश.....आपका देश हमारा.....देश का देश है.....
देश देश है.....भाई भाई है.....मैं मैं मैं.....मैं जहाँ जहाँ
गया देश देश मिला.....भाइयों तथा बहनों.....चीं चीं चीं
(ऐसी आवाजें आती रहती हैं। व्यक्ति २ के पास आकर गर्दन उठा कर हैरानी से भोंपू को देखता है। चप्पल और फिर तकिया लगाकर बन्द करने का प्रयत्न करता है पर आवाजें आती रहती हैं। जाकर ख को बन्द करता है। तुरन्त आवाजें बन्द हो जाती हैं। आकर २ को देखता है। हाँ का सिर हिलाता है। जाकर ख को एक पल के लिए धोलता है, आवाजें आती हैं, तुरन्त बन्द कर देता है, आवाजें बन्द हो जाती हैं।)

(कुछ देर शांति रहती है और व्यक्ति यूँ ही घूमता रहता है।)

व्यक्ति : (सिर हिलाकर) समझा ! (आकर एक कुर्सी पर बैठ जाता है, गिरने को होता है, संभल जाता है। चप्पलों को देखता है। उन्हें उतार कर बदल कर पहनता है। क की ओर

देखता है। सतर्क हो जाता है। धीरे-धीरे जाकर क को झटके से खोलता है, १ से भजन की आवाजें आती हैं, तुरन्त क को बन्द कर देता है। आवाजें बन्द हो जाती हैं। ठीक है ! (आकर कुर्सी पर बैठ जाता है। थका-सा आँखें मूँद लेता है। कुछ देर शांति रहती है। सहसा दोनों खिड़कियाँ क और ख अपने आप खुल जाती हैं और एक साथ १ से भजन की और २ से भाषण की आवाजें आने लगती हैं। हड़बड़ा कर व्यक्ति दोनों भोंपुओं के बीच आकर खड़ा हो जाता है और सिर घुमा-घुमा कर दाएँ-बाएँ देखता है। १ के पास जाकर १ को गर्दन उठाकर देखता है। २ के पास जाकर २ को गर्दन उठाकर देखता है। १ के पास जाकर २ को देखता है। २ के पास जाकर १ को देखता है। १ और २ के बीच दौड़ने लगता है। थककर कुर्सी पर बैठ जाता है। इशारे से अपने को समझाता है कि घबड़ाने की कोई जरूरत नहीं है और दिमाग से सोचना चाहिए ! सोचता है।) अभी कुछ देर पहले ऐसी ही कुछ मिलती-जुलती घटना घटी थी। वह सपना था या यथार्थ। (कमरे की रोशनी और तेज हो जाती है।) दोनों के बीच की स्थिति थी शायद। तब मैंने कुछ किया था और यथार्थ को अपने इन्हीं हाथों से (हाथों को देखते हुए) अपने क्राबू में किया था....पर कैसे, कैसे, कैसे....(न समझने का सिर हिलाता है। उठ कर इधर-उधर घूम कर बीच-बीच में रुक-रुक कर, कभी कुर्सी उल्टी रखकर, कभी खाट सरका कर, कभी एक टाँग पर खड़ा होकर, भोंपुओं पर प्रभाव डालने का प्रयत्न करता है। उल्टा प्रभाव पड़ता है। हर बार या तो प्रकाश तेज हो जाता है या आवाजें और तेज हो जाती हैं। वह घबड़ा

जाता है। हताश होकर जाकर खाट पर लेट जाता है। कुछ देर बाद दोनों खिड़कियाँ क और ख अपने आप बन्द हो जाती हैं और आवाज़ें भी शान्त हो जाती हैं। रोशनी तेज़ बनी रहती है। कुछ देर बाद बाहर से कबड्डी खेलने की तेज़ आवाज़ें आती हैं—हर तू तू तू तू तू...छल कबड्डी आल ताल मेरी मूँछें लाल लाल लाल लाल ला ला S S S S...हर कबडी कबडी कबडी कबडी बडी ब...डी... डी डी डी S S S S...। इसी बीच में ही फुटबॉल खेलने की आवाज़ें आती हैं। जोर से 'गोल' की बहुत से लोगों की सम्मिलित आवाज़ आती है और बाईं खिड़की से एक फुटबॉल अन्दर आकर गिरता है। एक बालक उसी खिड़की को फाँद कर आता है और फुटबॉल उठा कर उसी रास्ते लौट जाता है। फिर कबड्डी की आवाज़ें आती हैं जो धीमी पड़ती जाती हैं और बन्द हो जाती हैं। अन्दर का प्रकाश धीमा पड़ने लगता है। हल्की रोशनी में बारी-बारी से क और ख अपने आप खुलती और बन्द होती हैं तथा क्रमानुसार १ से आरती की घंटी के साथ स्पष्ट मधुर स्त्री स्वर में भजन की और २ से स्पष्ट गंभीर स्वर में नेता के भाषण की आवाज़ें आती हैं जिसमें भविष्य के लिए मन लुभाने वाले वायदे किए जाते हैं। यह सब ऐसा लगना चाहिए जैसे स्वप्न का संसार हो।)

- १ : (क खुली, ख बन्द) मन रे हरिभजु हरिभजु हरि भजु भाई। जा दिन तेरौ कोई न हो ता दिन राम सहाई।
- २ : (ख खुली, क बन्द) भाइयों तथा बहनों, अब आपके कष्ट के दिन इतिहास हुए और स्वर्णयुग आ गया है। आप इच्छा बाद में करेंगे पूरी पहले होगी। रेलों के सभी डिब्बों में मुलायम गद्दियाँ होंगी, रेलें समय से

चलेंगी, गन्तव्य पर समय से पहले पहुँचेंगी, और वे आपकी होंगी इसलिए जब तक मैं मंत्री रहूँगा आपको कोई किराया नहीं देना पड़ेगा (तालियाँ) ।

१ : (क खुली, ख बन्द) तंत्र न जानूँ मंत्र न जानूँ, जानूँ सुन्दर काया । मीर मलिक छत्रपति राजा, ते भी खाया माया ।

२ : (ख खुली, क बन्द) मैं छत्रपति राजा नहीं हूँ आपका सेवक हूँ, मैं राज्य कार्यों में व्यस्त रहता हूँ पर आप का हितैषी हूँ, मैं प्रायः विदेशों में रहता हूँ जिससे आप सुख से अपने देश में जीवन व्यतीत कर सकें, मैं जहाँ भी हूँ नित्य आपके ध्यान में डूबा हुआ हूँ ऐसा आप जानें ।

(व्यक्ति अंगड़ाई लेकर उठता है । चप्पलें पहनता है । उठकर बत्ती जलाता है । आवाज़ें भी तेज़ हो जाती हैं । मंच के बीच के भाग में आकर सिर घुमा-घुमा कर क, ख, १ और २ को देखता है ।)

१ : (क खुली, ख बन्द) मीर मलिक छत्रपति राजा, ते भी खाया माया । तंत्र न जानूँ मंत्र न जानूँ, जानूँ सुन्दर काया ।

२ : (ख खुली, क बन्द) ऐसा आप जानें नित्य आपके ध्यान में डूबा हुआ हूँ मैं जहाँ भी हूँ, आप सुख से अपने देश में जीवन व्यतीत कर सकें इसलिए मैं प्रायः विदेशों में रहता हूँ, आपका हितैषी हूँ, मैं राज्य कार्यों में व्यस्त रहता हूँ, आपका सेवक हूँ, मैं छत्रपति राजा नहीं हूँ ।

१ : (क खुली, ख बन्द) जा दिन तेरौ कोई ना हो ता
दिन राम सहाई सहाई सहाई सहाई सहाई सहाई ।

२ : (ख खुली, क बन्द) स्वर्णयुग आ गया है भाइयों भाइयों
भाइयों भाइयों भाइयों भाइयों.....चीं चीं भाइयों एं एं
एं भाइयों.....।

व्यक्ति : (पुरानी लड़खड़ाती आवाज़ सुनकर) याद आ गया !
(जाकर ख को बन्द कर देता है । आवाज़ बन्द हो जाती
है । क के पास जाकर उसे खोलकर बन्द कर देता है ।
भजन की आवाज़ आकर बन्द हो जाती है । खुश होकर
कुर्सी मंच पर सामने बीच में लाकर रखता है और उसके
सामने एक स्टूल रखता है । एक खुली आल्मारी में से एक
अधखाई रोटी एक टूटी प्लेट में लाकर स्टूल पर रखता है ।
फिर ढूँढ़ कर एक गिलास और एक टूटी सुराही इकट्ठा
करता है । एक अखबार का टुकड़ा लाकर प्लेट के नीचे
बिछाता है ! कुर्सी पर बैठता है । रोटी की ओर हाथ बढ़ा
कर रोक लेता है । क खुलती है और किसी सिनेमा की
भारती का रिकार्ड १ से बजता है । क और १ बन्द
हो जाते हैं । रोटी उठाने चलता है । फिर रुक जाता है ।
ख खुलती है ।)

२ : श्री सद्गुरु जी पिछले भाषण स्थल से चल चुके हैं
और शीघ्र ही यहाँ पहुँच जाएँगे । आप लोग कृपाकर
के जहाँ जैसे हैं वहीं वैसे बने रहें.....(एक सिनेमा के
प्रचलित गाने का रिकार्ड बजता है और सहसा रुक जाता
है जब कि ख खुली रहती है । व्यक्ति आवाज़ बन्द होते
ही मुड़ कर ख की ओर देखता है और उसे खुला पा हड़-
बड़ा कर उठ जाता है । डरा डरा ख के पास जाता है ।
दरवाज़ा छूकर हाथ हटा लेता है । हिम्मत करके ख को

बन्द कर देता है । पर बन्द करते ही २ से भाषण की आवाजें आने लगती हैं । घबड़ा कर उसके पास आ गद्गन उठा कर देखता है । चप्पल फिर तकिए से आवाज बन्द करने की कोशिश करता है पर बेकार । माथे का पसीना पोछता है । कुर्सी पर बैठकर सोचता है । अपने हाथ देखता है । उठकर ख को खोल देता है । आवाजें २ से आती रहती हैं । ख को बन्द कर देता है । २ से आवाजें बन्द हो जाती हैं । खुश होता है । जाकर १ और २ को बारी बारी से देखता है । २ को उठाने की कोशिश करता है । वह उठ जाता है । धीरे धीरे २ को उठाकर १ की जगह रख देता है और १ को उठाकर २ की जगह । अब जा कर क को धीरे से खोलता है । १ से पुराने घिसे रिकार्ड की भजन की आवाजें आती हैं जैसी आरंभ में आई थीं । क को बन्द करके ख को खोलता है । १ से आवाजें बन्द हो जाती हैं और २ से लड़खड़ाती आवाज में भाषण का स्वर सुनाई देता है जैसा आरंभ में था । ख को बन्द कर देता है । २ से आवाजें बन्द हो जाती हैं । आकर कुर्सी पर आराम से बैठ जाता है । रोटी का टुकड़ा उठाता है । कोई कुण्डी खटखटाता है । रोटी रखकर पीछे दरवाजा खोलने जाता है । रुक जाता है । क को खोलकर पूछता है—‘कौन है ?’ न कोई उत्तर मिलता है न १ से आवाजें आती हैं । न समझने का सिर हिलाता है । वह जल्दी-जल्दी क को बन्द करता और खोलता है । कोई असर नहीं होता । अब से उसकी गति धीरे धीरे तेज होती जाती है, उसके बोलने की आवाज ऊँची होती जाती है, और रोशनी कम होती जाती है । वह क को खोलता है । १ से कोई आवाज नहीं निकलती । १ के पास जाकर भजन के शब्द

गाने का प्रयत्न करता है । लौटकर क को बन्द कर देता है । ख को खोलता है । २ से कोई आवाज़ नहीं निकलती । २ के पास जाकर भाषण के शब्द बोलता है । इस प्रकार बढ़ती गति से बारीबारी ऐसा करता रहता है जब तक उसका स्वर चीख तक पहुँचने लगता है । तभी पर्दा गिरता है ।)



राष्ट्रसम्राट

(सूना लाटफ़ारम । दो कुली, मुन्नीलाल और देवीदयाल आते हैं । देवीदयाल के सिर पर सामान है—एक बकस और एक बिस्तर । मुन्नीलाल की सहायता से देवीदयाल सामान उतार कर रख देता है । दोनों कुली बैठ जाते हैं ।)

देवीदयाल : अब कैसे काम चलेगा, मुन्नीलाल ?

मुन्नीलाल : मुझसे मत पूछो ।

देवीदयाल : क्यों ?

मुन्नीलाल : क्योंकि जवाब मैं जानता हूँ ।

देवीदयाल : तब क्या, बता दो मेरी मुसीबत टले ।

मुन्नीलाल : मेरे पास जो जवाब है वह तुम सुनना नहीं चाहोगे । उससे मुसीबत टलेगी नहीं और आ जाएगी ।

देवीदयाल : तुमने मुझे कुली बनाया क्यों ? तुमने मुझे सपने दिखाये क्यों.....

मुन्नीलाल : कोई किसी को नहीं बनाता । जब मैं सोता था तब तुम सपने देखना चाहते थे, तुमने देखे । (सिर छू कर) सब भाग्य का खेल है । भगवान् राम की इच्छा । एक जिंदगी मिली है, मर्यादा से काट दो.....

देवीदयाल : जब पूरा नहीं पड़ता, पेट में दाना नहीं पड़ता, तब मर्यादा कैसे निभेगी ।

मुन्नीलाल : मुझसे मत पूछो ।

देवीदयाल : क्यों ?

मुन्नीलाल : क्योंकि मैं जवाब जानता हूँ ।

देवीदयाल : यही न कि मुसाफ़िरों की जेबें काटूँ ?

मुन्नीलाल : नहीं, यह तुम्हें रामचरन ने बताया होगा ।

देवीदयाल : बच्चों का पेट काटूँ ? (कुछ उत्तेजित ।)

मुन्नीलाल : नहीं, यह तुम्हें करीम भाई ने बताया होगा ।

देवीदयाल : तब क्या करूँ, इंजन के आगे कूद पड़ूँ ? (और उत्तेजित)

मुन्नीलाल : नहीं, यह तुम्हें राजा ने बताया होगा ।

देवीदयाल : (चुनौती के स्वर में) अगर तुम सबकी बात जानते हो, पाँडे हो, तो बताओ मैं क्या करूँ, एक जवाब तुम भी तो दो !

मुन्नीलाल : दूँ ?!

देवीदयाल : हाँ, हाँ, दो !

मुन्नीलाल : चुपचाप अपना काम करो ।

देवीदयाल : (अवाक् हो, मुँह खोल, फिर चिढ़ कर हाथ नचा) चुपचाप अपना काम करो !

मुन्नीलाल : क्या मैंने कुछ ग़लत कह दिया ?

देवीदयाल : (ताली बजा कर) मुन्नीलाल और ग़लत बात ! हो, हो, हो, तुम ग़लत कह ही नहीं सकते हो ! हो, हो, हो, हो....

मुन्नीलाल : (कुछ विचलित हो) क्यों, क्यों नहीं कह सकता मैं, मैं जो चाहूँ....

देवीदयाल : (हाथ से मुँह दबा कर हँसी रोकते हुए) जो चाहो वह कहो, वह बात दूसरी है, मुन्नीलाल ! तुम सीधे बहुत

हो ! ग़लत बात कहने के लिए भेजा चाहिए, भेजा (अपना सिर छू कर दिखलाता है) भाग्य से ग़लत बात नहीं कही जाती (फिर सिर छूता है, हँसता है, सिर पर कुली की पगड़ी रखी महसूस करके उतार लेता है, सिर खुजलाता है ।)

मुन्नीलाल : (सहज हो) पगड़ी लगा लो, अच्छे लगते हो ।

देवीदयाल : (शरमा कर) अब क्या लगूंगा.....(अनन्त की ओर देख कर स्मृति में खो-सा जाता है ।)

मुन्नीलाल : देवीदयाल ! देवीदयाल !! देवीदयाल !!! (उठकर उसकी आँखों के सामने एक हाथ चलाता है ।)

देवीदयाल : (सजग होकर) तुमने मुझे पुकारा ।

मुन्नीलाल : अबे उठ, पुकारा-पुकारा करता है, कोई सनीमा है क्या ? (बैठ जाता है ।)

देवीदयाल : (सिर पर हाथ फेर कर) ज़रा सिर को ठंडक लगी तो सोचने लगा । सामान उठाने के काम लाते-लाते सिर ठस हो गया है ।

मुन्नीलाल : मैं तो बचपन से सिर पर सामान उठाता आया हूँ, मेरा तो सिर ठस नहीं हुआ । तुम्हारा कोई खास सिर हो तो बात दूसरी है । कोई कुली अपने सिर के बारे में ऐसी बातें मन में नहीं लाता । मैंने ग़लती की तुम्हें.....

देवीदयाल : (मुन्नीलाल की ओर झुक कर) तुमने ग़लती की न.....मैं जानता था.....

मुन्नीलाल : हाँ, मैंने ग़लती की । तुम्हें कुली बनाने के पहले जाँच लेना चाहिए था जैसा उस घटना के बाद हमेशा पंडित जी किया करते थे । (याद करने की मुद्रा में आकर) मेरे

गाँव में एक पंडित जी आया करते थे । (रुक कर) पर तुम्हें श्रद्धा तो है ही नहीं....

देवीदयाल : नहीं, नहीं, कहो....तुम्हारे गाँव में एक पंडित जी आया करते थे जिनके....(अपना मुँह बन्द कर लेता है और मुन्नीलाल की ओर ऐसे देखता है जैसे कोई भूल हो गयी हो ।)

मुन्नीलाल : (अपनी धुन में) जिनके लम्बी दाढ़ी थी जो हर बार उनके राम कहने पर हिलती थी....

देवीदयाल : (मुग्ध अवस्था में) राम कहने पर हिलती थी....

मुन्नीलाल : कृष्ण कहने पर नहीं हिलती थी और राम कहने पर हिलती थी । इसे वह राम की महिमा कहा करते थे और राम को कृष्ण से बड़ा भगवान् मानते थे । वे राम के इसीलिए भक्त थे ।

देवीदयाल : (आराम से बैठते हुए) वे राम के भक्त थे और कथा के पहले....

मुन्नीलाल : और कथा के पहले बताते थे कि कैसे एक दिन एक आदमी उनके पास आया और बोला (हाथ जोड़ कर अभिनय करते हुए) 'मुझे भी राम का भक्त बना लो' ।

देवीदयाल : (उत्सुक होकर) मुझे भी राम का भक्त बना लो, तब....

मुन्नीलाल : (खुश होकर) बनोगे, देवीदयाल !

देवीदयाल : (सजग होकर) नहीं, नहीं....

मुन्नीलाल : बन जाओ न, सब दुःख मिट जाएगा....

देवीदयाल : मैं ऐसे ही ठीक हूँ, तुम कहानी कहो....

मुन्नीलाल : तब पंडित जी ने कहा (हाथ उठाकर अभिनय करते हुए) 'जैसी राम की इच्छा' । और वह राम का भक्त हो गया । रोज़ आता और राम की कथा सुनता । एक

दिन तेजू नाई की पंडित जी से कहा-सुनी हो गयी । सो रात में तेजू नाई ने पंडित जी की दाढ़ी उस्तरे से तराश दी । सुबह उठकर जब पंडित जी ने अपनी दाढ़ी कटी देखी तो राम का नाम लेना बन्द कर दिया और मौन ले लिया । उनकी हालत बिगड़ती गयी । न खाते, न पीते और न दाढ़ी के बिना राम का नाम लेते । उनकी हालत देख वह नया भक्त पास की पहाड़ी पर गया और दाढ़ी बढ़ाने वाली बूटी उखाड़ कर जल्दी से पंडित जी के पास पहुँचने के लिए (अभिनय करता है) हनुमान जी की तरह चोटी पर से कूद गयातब से....

देवीदयाल : (ज़ोर से हँसते-हँसते लोट-पोट होने लगता है ।)

मुन्नीलाल : तुम हमेशा यह कहानी सुनकर हँसते क्यों हो ! तुम्हारे मन में श्रद्धा नहीं है । मेरे तो आँसू आ जाते हैं । बेचारा...देवीदयाल, बस एक बार पीपलवाले हनुमान जी को हाथ जोड़ दो, क्या मेरे लिए इतना भी नहीं करोगे ?

देवीदयाल : (हँसी रोकते हुए) मैं तेरे लिए जान दे सकता हूँ, पर झूठ-मूठ को....(सहसा एक ओर उँगली उठाकर) अरे, यह कौन गया इधर से, देखा तुमने ?

मुन्नीलाल : (उधर देखकर जहाँ कोई नहीं है) हाँ देखा, अरे यह तो टेसन है । छोटे-बड़े सभी को आना पड़ता है । अब लोग हनुमान जी के मन्दिर में नहीं जाते, यहीं आते हैं । देवीदयाल बस एक बार....

देवीदयाल : नहीं मुन्नीलाल, बहुत पहले दूसरे का मन रखने में कुछ नहीं लगता था । अब बेमन से कुछ करने को जी नहीं चाहता, जब से....

मुन्नीलाल : जब से तुम्हारे सिर को कुछ ज्यादा हवा लग गयी है, पगड़ी लगा लो....

देवीदयाल : (सिर पर हाथ फेर कर) अब मैं कुलीगिरी नहीं करूँगा ।

मुन्नीलाल : (समझाने के स्वर में) पागल मत बनो । तुम्हारा मन नहीं है तो मत हाथ जोड़ना । मैं ही दो बार....

देवीदयाल : (बच्चों की तरह सिर हिला कर) नहीं मुन्नीलाल, अब नहीं !....मैं इस लायक नहीं हूँ ।

मुन्नीलाल : राजा कहता है जो एक बार कुली वह हमेशा कुली । हम लोग तो कभी सोचते भी नहीं कि कुछ और बनना है, फिर तुम....

देवीदयाल : मैं इस लायक नहीं हूँ कि कुली बन सकूँ । मैं बहुत बुरा आदमी हूँ । तुम्हें मेरी पुरानी बातें मालूम होतीं तो तुम मुझे कुली कभी नहीं बनाते । मैंने तुम लोगों को धोखा दिया है....

मुन्नीलाल : धोखा किसने नहीं दिया है । अपना मन छोटा मत करो । कुलीगिरी छोड़ दो । कोई बड़ी चीज़ नहीं है । कौन-सा सुख है हमें । कुछ और नहीं कर सकते इस-लिए सब अपनी-अपनी जगह पड़े हैं, सो हम भी.... तुम आराम करो, मैं आज तुम्हारा काम कर दूँगा.... (यह कहता हुआ मुन्नीलाल चला जाता है ।)

(पास लगे 'लाउडस्पीकर' की आवाज़ :
'कलकत्ते से आने वाली १३ नम्बर तूफ़ान गाड़ी अपने ठीक समय से दो दिन बाद आएगी । लखनऊ से आने वाली ११२ नम्बर की सवारी गाड़ी आज इलाहाबाद न आकर कुछ कारणों से कानपुर चली जाएगी । दिल्ली जाने वाली बेनम्बर

गाड़ी आज अपने समय से तीन घंटे पूर्व ही छूट जाएगी। लाटफ़ारम पर पड़ी सवारियों से अनुरोध है कि वे अपने असबाब, अपनी जेबों और अपने बीबी बच्चों की निगरानी पूरी मुस्तैदी से करते रहें क्योंकि यातायात विभाग उनकी हिफ़ाज़त की कोई गारंटी नहीं देता है। अभी लागू हुए नये नियम के अनुसार अब हमारी अगली सूचनाएँ सुनिए।' रेडियो की तर्ज़ पर कुछ विज्ञापन प्रसारित किये जाते हैं। इसी बीच राजेन्द्र और सीता आते हैं जिनकी उम्र ३५ के आसपास है। राजेन्द्र के कन्धे पर 'ट्रांजिस्टर' टंगा है। रखे सामान के पास आकर)

राजेन्द्र : लो सीता, तुम यहाँ बैठो, मैं टिकट ले आता हूँ (देवीदयाल से) देखो कुली ज़रा ध्यान रखना।

देवीदयाल : मैं अब कुली नहीं हूँ। होता तो ध्यान रखता।

राजेन्द्र : (आश्चर्य और व्यंग्य से) तुम कुली नहीं हो ? फिर क्या हो ? (सीता सामान पर बैठ जाती है।)

देवीदयाल : अभी तय नहीं किया है क्या बनूँगा। मन में होता है फिर.....

राजेन्द्र : अच्छा, अच्छा, ज़रा ध्यान रखना, मैं अभी आता हूँ। (चला जाता है।)

(देवीदयाल अनमना-सा बैठा रहता है। सीता कई तरह से ढंग बदल कर बैठती है। एक अजीब बेआवाज़ का वातावरण

कुछ देर रहता है । फिर नीरवता को
भेदती हुई एक तेज इंजन की सीटी सुनाई
पड़ती है । सीता चौंक जाती है । एक
टिकटबाबू आता है ।)

टिकटबाबू : टिकट लेकर वे अभी तक नहीं आये ?

सीता : (बिना मुड़े) मैं क्या जानती नहीं थी कि यही होगा,
फाँसूंगी मैं !

टिकटबाबू : बड़ी देर कर दी । शायद टिकट मिलना शुरू न हुआ
हो....

सीता : देखिए न, ऐसा लगता है न कि यह लाटफ़ारम हिल
रहा है, टेढ़ा हो रहा है, एक सिरे से डूब रहा है....

टिकटबाबू : (इधर-उधर देखकर) ऐसा मुझे तो नहीं लग रहा है ।
शायद आपकी तबियत ठीक नहीं है....

सीता : नहीं, नहीं ! मैं ठीक हूँ । सब मर्द एक से होते हैं ।
उन्हें कुछ नहीं दीखता ।...आज कौन-सा दिन है ?

टिकटबाबू : आज के दिन पूरब दिशा से जाने वाली गाड़ियाँ खाली
चलती हैं । मुसीबत में ही आदमी आज उस ओर
चलता है ।

सीता : एक तरह से अच्छा ही है । मुसीबत में ही आदमी को
सफ़र में आराम और जगह मिल जाए तो क्या कम
है ।....मुझे रेल में खिड़की के पास बैठना अच्छा लगता
है ।

टिकटबाबू : (सहानुभूति के स्वर में) आपके यहाँ क्या कोई....

सीता : मेरे है कौन । भाई का सुख मैंने जाना नहीं, पिता हैं,
उन्हीं के पास....

टिकटबाबू : (देवीदयाल को देखकर) ए कुली, ज़रा नम्बर एक के
फाटक पर देखो मलहोत्रा बाबू आ गये हैं क्या ?

(देवीदयाल उठकर चला जाता है जैसे
आज्ञाकारी यंत्र हो।)

सीता : इतने बड़े टेसन पर हम लोग अकेले रह गये !

टिकटबाबू : मेरे भी कोई भाई नहीं है। इस दुनिया में मैं बिलकुल
अकेला हूँ....

सीता : मुझे पूरी हमदर्दी है आपके साथ। इस दुनिया में पति
या पत्नी मिलना आसान है पर भाई मिलना बहुत
मुश्किल...(देवीदयाल जिधर बैठा था इधर देखकर) कुली
तो चला गया, कौन चढ़ाएगा मेरा सामान ?

टिकटबाबू : घबड़ाइए नहीं, मैं सब इंतजाम कर दूँगा....एक तरह
से यह भी अच्छा ही है....

सीता : (घबड़ाये स्वर में) क्या ?

टिकटबाबू : यही, भाई का न होना। सुना है आजकल भाई-भाई
भी लड़ते हैं।

सीता : (हँस कर) लड़ने को क्या पति-पत्नी नहीं लड़ते। इस
समय मैं इनसे लड़कर ही तो....

टिकटबाबू : मेरे पत्नी भी नहीं है।

सीता : ओफ़, तब तो आप बिलकुल अकेले हैं। बिना लड़े-
भिड़े भी तो ज़िन्दगी की गाड़ी नहीं चलती। आप
किससे लड़ते होंगे....

टिकटबाबू : लड़ाई तो अक्सर मुसाफ़िरों से ही करनी पड़ती है,
और अपने अफ़सरों से भी। पर अपनों से लड़ने में
जो बात है वह बाहरी लोगों से लड़ने में नहीं....

सीता : यह बात तो है। इस समय मुझे इनसे लड़ कर बड़ा
मज़ा आ रहा है। अभी यह आएँगे तो ज़रा इनका
मुँह देखिएगा। मुझे तो इनका लड़ाई के बाद फूला
हुआ मुँह बहुत अच्छा लगता है। वैसे मैं लड़ाका

नहीं हूँ पर कभी-कभी नशा-सा चढ़ आता है....

टिकटबाबू : किताबों में मैंने पढ़ा है कि लड़ना नहीं चाहिए....

सीता : लिखने को कहिए तो मैं भी लिख दूँ । ये तो कहा-
नियों में अक्सर ऐसी बातें लिखते हैं, विशेष कर जब
सरकारी या बड़े सम्पादकों की पत्रिकाओं में कहानी
भेजनी होती है । और मेरे पिता जी तो नेता हैं ।
मंत्री भी रह चुके हैं । पिता जी तो हर भाषण में प्रेम
का ही सन्देश देते हैं । जब मैं छोटी थी तो अक्सर
उनके साथ जाया करती थी (नक़ल के स्वर में) 'भाइयो
तथा बहनो, सब लोग प्रेम से मिल-जुल कर रहें, दुश्-
मन की ज़मीन नहीं हृदय जीतें, काम करके देश की
नींव मज़बूत करें....' (हँसकर) यह सुनकर मुझे बड़ा
मज़ा आता था कि जैसे देश कोई घर है और पिता
जी उसकी नींव रखवा रहे हैं । ज्यादातर ऐसी बातें
सुनकर मन ऊबता ही था । घर आते ही पिता जी
माँ से लड़ा करते थे । मुझे लगता था कि पिता जी
लोगों को बेवकूफ़ बनाते हैं । पर अब जानती हूँ कि
सभी ऐसा करते हैं....अरे, कुली कहाँ गया....

टिकटबाबू : (पास आकर) लाइए, आपका हाथ देखूँ, आप बहुत
भाग्यशाली मालूम पड़ती हैं....

सीता : (घबड़ाकर, ऊपर से हँसकर) अरे, आप टिकटबाबू हैं
कि हाथबाबू....ये आये नहीं....

टिकटबाबू : (घूमकर देखता है) शायद आते ही हों । आज यहाँ से
एक महापुरुष जाने वाले हैं । दूर-दूर तक गाड़ियाँ
रुकवा दी गयी हैं । मुझे भी इन्तज़ाम करना है....
अच्छा चलूँ....(चला जाता है ।)

सीता : इनका तो काम ऐसा ही होता है । पता नहीं, कहाँ

लाकर बैठा गये । कोई नज़र नहीं आता । टेसन है कि कब्रिस्तान है !

(सीता अकेली कई तरह से ढंग बदलकर बैठती है । बीच-बीच में इंजन की आवाज़ें आती हैं । कभी-कभी दूर के 'लाउड-स्पीकर' से आवाज़ें आती हैं : 'इंजन-किसान के ड्राइवर मुन्नेलाल सुनें, प्रयाग की लाइन उनके लिए खाली है, आगे बढ़ जाएँ...ड्राइवर मुन्नेलाल, ड्राइवर मुन्नेलाल प्रयाग के टेसन मास्टर के लिए केबिन पर रुक तरकारी का झोला और एक तरबूज ले लें, अभी खास खबर आयी है । १०४ पूरब जाने वाली माल-गाड़ी का इंजन, १०४ पूरब...।' राजेन्द्र आता है ।)

सीता : टिकट मिला ?

राजेन्द्र : कहाँ मिला । (कंधे पर टंगे ट्रांजिस्टर को नीचे रखकर) अभी वहाँ कोई है ही नहीं । गाड़ी लगने में अभी देर है । शायद आज और भी देर से लगे क्योंकि राष्ट्र-सम्राट यहाँ से आज ही जाने वाले हैं । कैसा दिन चुना तुमने !

सीता : (हँसती है ।)

राजेन्द्र : (परेशान होकर) हँस क्यों रही हो ?

सीता : (और हँसती है ।)

राजेन्द्र : (क्रोध में) मैं पूछता हूँ इसमें हँसने की कौन-सी बात कह दी ! तुम औरतों की आदत...

सीता : अरे, इतना सब तो मैंने यहीं बैठे-बैठे मालूम कर लिया

था, तुम उतनी दूर गये भी....लगता है टेसन हिल रहा है, टेढ़ा हो रहा है, डूब रहा है....

राजेन्द्र : लगता है तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है....

सीता : (सम्हल कर) यह कैसा टेसन है ? यहाँ तो रौनक होनी चाहिए । सुनो, मैं गाड़ी में खिड़की के पास वाली जगह पर बैठूँगी....

राजेन्द्र : असल में यह गदहा-लाइन है । यहाँ से चलने वाली सवारी गाड़ियाँ यहीं पर बन कर लगती हैं । इसी-लिए....

सीता : मैं जब पिता जी के साथ जाती थी....

राजेन्द्र : (तन कर) अफ़सोस की बात है कि मैं तुम्हारा पिता जी नहीं हूँ । और अगर मेरे साथ चल रही हो तो 'मैं जब पिता जी के साथ जाती थी' की रट लगाने की ज़रूरत नहीं है ।

सीता : मैंने रट कहाँ लगायी है । अभी एक ही बार....

राजेन्द्र : मैं एक बार भी सुनने के लिए तैयार नहीं हूँ....(झुक कर एक ओर देखता है ।) अभी तो कोई 'सिगनल' भी नहीं झुका हुआ है !

(पास के 'लाउडस्पीकर' से आवाज़ : 'दो नम्बर के कुली देवीदयाल को नियम तीसरे १०६ के अन्तर्गत आज्ञा दी जाती है कि वे सात नम्बर के 'सिगनल' खम्भे पर चढ़ कर 'सिगनल' गिरा दें क्योंकि कई दिन से वहाँ कोई गाड़ी खड़ी हुई है । अगर वे चाहें तो इस काम के बदले में एक घण्टे की विशेषाधिकार-छुट्टी के लिए प्रार्थना-पत्र दे सकते हैं । आज्ञा की

जाती है कि टेसन मास्टर की संस्तुति पर राष्ट्रसम्राट जी उन्हें छुट्टी प्रदान कर देंगे । अब आवश्यक सूचना के लिए तैयार हो जाइए' । (एक सैनिक-धुन बजती है, तब सूचना दी जाती है ।) 'विश्वसनीय सूत्रों से पता चला है कि हमारे चिरंजीवी राष्ट्रसम्राट जी आज किसी समय किसी लाटफ़ारम पर तशरीफ़ लाएँगे ! अतः नियम तीसरे ८ के अनुसार सब यात्रियों से प्रार्थना है कि वे फ़ौरन अपना-अपना असबाब लेकर गदहा-लाइन पर इकट्ठे हो जाएँ और सारे लाटफ़ारम खाली कर दें । गलती करने वाले को सख्त सज़ा दी जाएगी ।' अब से मंच पर असबाब और अधिकतर बूढ़े यात्रियों की संख्या बहुत धीरे-धीरे और बिना शोर-गुल के बढ़ेगी । सामान दो ही कुली उठा कर लाएँगे ।)

सीता : मनोरमा वालों ने तुम्हारी कहानी छापी कि नहीं ?

राजेन्द्र : वह तो बस श्री सोहन, किसन जी और कुमारी माधुरी की कहानियाँ छापते हैं । इन सम्पादकों के कुछ मन-पसन्द लेखक-यार होते हैं जो इनकी बीबियों की चापलूसी करते हैं । अच्छी कहानी की पहचान....

सीता : मैंने तुमसे कहा था कि उपन्यास लिखो....

राजेन्द्र : (तन कर) मैं नहीं लिखता उपन्यास ! (टहलते हुए) क्यों लिखूँ ! मैं कहानीकार हूँ....कहानीकार....(सिर उठाकर अनन्त की ओर देखता है ।)

सीता : जो मन में आए सो करो, मैंने एक बात कही थी....
मेरे पिता जी का कहना अगर तुमने माना होता तो
आज....

राजेन्द्र : फिर पिता जी....

सीता : एक बार नहीं सौ बार पिता जी....क्या खराबी है
मेरे पिता जी में....सुनो तो....

राजेन्द्र : (हाथ जोड़ कर) कोई खराबी नहीं है देवी जी ! आपके
पिता जी देवता हैं, महान् नेता हैं, भूतपूर्व मंत्री हैं,
हनुमान जी के उपासक हैं, माता आनन्दमयी के चेले
हैं, गुरुघंटालों के गुरु हैं, आप ऐसी रूपवती, भानमती,
हठी के जनक हैं, मुझ नाचीज कीड़े के श्वसुर हैं, मैं
उनको लाखों प्रणाम करता हूँ और प्रार्थना करता
हूँ....

सीता : अरे, यह कोई घर है । टेसन पर सबके सामने पागलों
ऐसी बातें....(आँचल उठा कर आँखें पोंछती है) देखो,
कौन इधर आ रहे हैं....(उठ कर) अरे, यह तो राष्ट्र-
सम्राट हैं....घबड़ाये-से, खोये-से, अनमने-से, इधर ही
चले आ रहे हैं, तुम यहीं ठहरो ...(तेजी से मंच के एक
किनारे पर जाकर, धोती से सिर ढँककर, पसीजी आवाज़ में
झुक कर अदृश्य राष्ट्रसम्राट के पैर छूकर, प्रणाम करने का
अभिनय करते हुए) प्रणाम ! राष्ट्रसम्राट जी, आपने
पहचाना मुझे (सिर उठाकर) मैं खागा के श्रीपतीजी
की पुत्री सीता हूँ....अरे, यह आपकी अचकन पर क्या
लग गया (हाथ बढ़ाकर कुछ झाड़ने का अभिनय) जब
आपने खागा में एक कुटिया में दीन-हीन जनता के
बीच रहने का व्रत लिया था और उस कुटिया का
शिलान्यास एक विदेशी राजदूत से करवाने की इच्छा

प्रकट की थी तब सारा इन्तज़ाम मेरे पिताजी ने....
 जी हाँ, मैं वही सीता हूँ । आप अनेकों कार्यों में संलग्न होने के कारण वहाँ रह नहीं पाये पर कुटिया में रोज़ दीप जलाने का कार्यभार आपने मुझी पर सौंपा था, मैं वही सीता हूँ....(शरमा कर) एक बात मैं आपसे छिपा गयी, आपसे बिना पूछे मैंने उस कुटिया-महल के आँगन में एक तुलसी का बिरवा भी रोपा था, आप दुबारा वहाँ आ पाते तो उसे फलते-फूलते देख ज़रूर खुश होते....मैं अपने इन्हीं हाथों से उसमें रोज़ पानी देती थी और हर संध्या पास ही दीप जला कर आपके आने की प्रतीक्षा करा करती थी मैं वही सीता हूँ.... पहचान लिया न आपने ! ओफ़, आपकी याददाश्त कितनी अच्छी है । आइए-आइए....(आगे-आगे चलती है और मुड़-मुड़ कर अदृश्य राष्ट्रसम्राट से आने का आदर-पूर्वक संकेत करती है । अपने सामान के पास आकर, राजेन्द्र से) ज़रा बिस्तर झाड़ कर बकस पर ठीक से रख दो ! राष्ट्रसम्राट जी न जाने कब से अपने ही पैरों पर खड़े हैं, थक गये होंगे (राजेन्द्र सामान लगाता है) आइए, बैठिए....हाँ, अब ठीक है मैं अभी टिकटबाबू को, टेसन मास्टर को, उप-टेसन मास्टर को, पूछ-ताछ बाबू को, सबको बुलवाती हूँ । राजेन्द्र !....अरे, हाँ तुम्हारा परिचय तो करवाना ही भूल गयी । यह मेरे पति राजेन्द्र हैं, बहुत मशहूर पत्रकार हैं, आपके प्रशंसक हैं, बहुत दिनों से आपका इन्टरव्यू....

राजेन्द्र : (तन कर) मैं कहानीकार हूँ....

सीता : (राजेन्द्र के कन्धे पर चपत लगाते हुए) चलो हटो, इनसे क्या छिपाना, इनसे क्या संकोच....यह तो मेरे पिताजी

के मित्र हैं, घर ही के आदमी हैं, मेरे चाचा जी हैं...
 (अदृश्य राष्ट्रसम्राट की ओर मुड़कर) चाचा जी, असल में यह हर गुणी व्यक्ति की तरह बेहद संकोची हैं। जैसे मेरे पिता जी मंत्री होने पर भी अपने को जनता का सेवक कहा करते थे वैसे ही ये पत्रकार होते हुए भी अपने को घटा कर महज़ कहानीकार ही कहते हैं....अरे, राजेन्द्र जाओ, पूछ-ताछ बाबू को, टेसन बाबू को, ज़िला बाबू को, उप-ज़िला बाबू को....सब को बुला लाओ....देखो, चाचा जी कुछ कह रहे हैं.... अभी नहीं बुलवाऊँ, आपको यह सब तामझाम पसन्द नहीं है, इसीलिए चुपके से, बदमाश अफ़सरों की आँखों से बचकर, आप टेसन पर टहल आये ! ओह, आप भी कितने सरल हैं, कितने दयावान हैं, कितने महान् हैं....

राजेन्द्र : (दोनों एड़ियाँ उठाते-गिराते हुए) यह सब ढोंग है....

सीता : (एक पल अवाक् राजेन्द्र को देखकर, फिर जल्दी-जल्दी) ठीक कहा तुमने राजेन्द्र, तुम कितने अच्छे यथार्थ के पारखी हो, यह अफ़सर ढोंगी हैं जो मज़े से टेसन पर घूम रहे हैं जैसे राष्ट्रसम्राट चाचा जी यहाँ पर आये ही न हों। वे सब जानते हैं कि बिचारे राष्ट्रसम्राट जी गदहा-लाइन पर असबाब पर बैठे हुए हैं, फिर भी उन्हें अपने आमोद-प्रमोद से फुर्सत नहीं अच्छा हुआ आज मैं यहाँ आ गयी, नहीं तो न जाने क्या होता राष्ट्रसम्राट जी का ?

राजेन्द्र : राष्ट्रसम्राट जी कोई बच्चे नहीं हैं !

सीता : (अनसुनी करके, असबाब की ओर झुक कर) अपने ही पैरों पर खड़े-खड़े आपको कुछ हो जाता, आप सो

जाते, आप मूर्ति बन जाते, तो मैं अपने को कभी क्षमा न कर पाती....फिर कौन आपकी जगह लेता....पिता जी तो अब कुछ करना नहीं चाहते और ये....ओफ्, मैं क्या-क्या सोचने लगी । अपनों को तकलीफ़ में देख कर बुरे विचार आते देर नहीं लगती । मैं भी कैसी-कैसी कल्पना करने लग गयी....(राजेन्द्र से) यह सब तो तुम्हें कल अखबारों में लिखना है, अब बदमाश सम्पादक....चाचा जी, आप कुछ कह रहे हैं, आप सोना चाह रहे हैं, आप सो जाइए, आप आराम कर लीजिए, आप आँखें मूँद लीजिए, लीजिए मैं पंखा झलती हूँ (आँचल से असबाब पर हवा करती है) मैं गाड़ी में खिड़की के पास बैठना चाहती हूँ....नहीं, नहीं, आपको किसी से सिफ़ारिश करने की ज़रूरत नहीं है....मैं खुद ही, और फिर राजेन्द्र तो है, इस समय वह किसी को आपके पास भटकने भी नहीं दे रहा है....और फिर मालूम नहीं गाड़ी कब आएगी, कितनी भरी आएगी, किधर से आएगी, आकर जाएगी कि नहीं....

(अब तक लाटफ़ारम बूढ़े यात्रियों और उनके असबाबों से भर जाता है । पास के 'लाउडस्पीकर' से आवाज़ : 'अभी-अभी मिली सूचना के अनुसार यातायात के मन्त्री जी ने कृपापूर्वक निर्णय लिया है कि अब से यात्रियों की सुख-सुविधा के बारे में विशेष रुचि वे स्वयं लेंगे । उन्होंने (यहाँ पर सूचना रोककर एक विज्ञापन का गाना)....उन्होंने अपने बचपन के

दिनों को याद करते हुए एक भाषण में कहा कि जब वे गरीब विद्यार्थी थे तब वे जाती रेलगाड़ियों को ललचायी नज़रों से अक्सर देखा करते थे । यात्रियों की तकलीफ़ों को महसूस कर उनका हृदय द्रवित हो जाया करता था । ऐसे ही मौक़े पर उन्होंने सोचा था कि अगर मैं यातायात का मंत्री बन जाऊँ तो पहला सुधार यह करूँ कि यात्रियों को अलग रेलगाड़ी में ले जाऊँ और उनके सामान को पीछे-पीछे चलती अलग मालगाड़ी में । आज उनके स्वप्नों के साकार होने का दिन आया है । अभी-अभी हमें निर्देश मिला है कि यात्रियों के हित में आज से वे अलग सवारी गाड़ी में सफ़र करेंगे और सामान पीछे-पीछे अलग मालगाड़ी में । (आवाज़ बदल कर) यात्रियों को सूचना दी जाती है कि वे गदहा-लाइन पर अपना सामान छोड़कर तुरन्त तीन नम्बर के लाटफ़ारम पर इकट्ठे हो जाएँ । उनके माल की हिफ़ाज़त के लिए एक नयी बीमा कम्पनी की योजना बनायी गयी है जिससे टिकट की दर में नाम-मात्र की बढ़ती आ जाएगी ।' इंजन की आवाज़ें, फिर शान्ति । अब से मुसाफ़िर धीरे-धीरे मंच छोड़ना आरम्भ कर देंगे । सामान रह जाएगा ।)

सीता : शोरगुल से जग गये आप ! ओफ़ कितना थक गये थे आप और कितने ज़रा से विश्राम से तरोताज़ा हो गये आप । कितना कठिन और कितने त्याग का जीवन है आपका । आपने तो नैपोलियन को भी मात कर दिया । सुना है वह घोड़े की पीठ पर सो लेता था । पर आपने टेसन पर असबाब पर सो कर सारे देश के सामने जो नमूना पेश किया वह इतिहास में सुन-हरे....क्या बात है, आप क्या ढूँढ़ रहे हैं, आप बेचैन क्यों हैं....इसराइल और अरब की लड़ाई, ईरान में जासूसों को फाँसी, भारत का अणु बम बनाने का निश्चय, बँगला देश की समस्या....यह नहीं....फिर क्या, क्या कहा....अच्छा, अच्छा, समझी, मैं भी कितनी नासमझ हूँ, महसूस तो मैं भी कर रही थी, पर सोचा था गाड़ी आएगी तो डिब्बे में चली जाऊँगी, यहाँ कहाँ । चलती गाड़ी में तो मुझे डर लगता है और सोचती रहती हूँ कि इस बीच कोई मेरी खिड़की के पास वाली जगह ले न ले, पर और कोई चारा भी तो नहीं रहता । आज तो गाड़ी के आने का ठिकाना भी नहीं है, (खोये से स्वर में) लगता है न वहाँ जा सकूँगी, न यहाँ, न खिड़की के पास बैठ सकूँगी, (सजग होकर) पर हम औरतों की तो आदत पड़ जाती है, परेशानी नहीं मालूम पड़ती, पर आप आइए, आइएइधर एकान्त में हो लें....हाँ, हाँ, जनेऊ चढ़ा लें.... लाइए, मैं मदद कर दूँ (मदद करने का अभिनय) हाँ, अब ठीक है....(मंच के पीछे सीता अदृश्य राष्ट्रसम्राट को ले जाने का अभिनय करती है, पहुँच कर राजेन्द्र को बुलाती है) आप बैठिए, हम दोनों आड़ करे रहेंगे (सीता और

राजेन्द्र मंच की ओर पीठ कर हाथ पकड़ कर घेरा-सा बनाते हैं) कहीं ऐसे में कोई बदमाश पत्रकार आपका चित्र न खींच ले....नहीं, नहीं, ये ऐसा नहीं करेंगे ऐसी वैसी तसवीरें खींचना इनके बस का नहीं....मैं तो इन्हें अच्छी तरह से जानती हूँ, इतना शरमाते हैं (कुछ झुक कर राजेन्द्र का हाथ पकड़े हुए) क्या, यह जगह आपको पसन्द नहीं है....यहाँ हरी घास कम है, वहाँ क्या राष्ट्रमहल के लान में जाने की आपकी आदत पड़ गयी है....ओफ़, कितनी परेशानी उठानी पड़ रही है आपको । (सीधे होकर) आइए, इधर आइए....(राजेन्द्र और सीता जलूस बनाकर धीरे-धीरे मंच के सामने एक ओर आते हैं । पहुँच कर सामने मुँह कर, फिर हाथ पकड़ कर घेरा बनाते हैं ।) यहाँ ठीक रहेगा, इधर गाड़ियाँ कम आती हैं इसलिए जंगली घास उग आयी है.... हाँ, आप बैठ जाइए, हम लोग आड़ लगाये हैं....(ज़ोर से इंजन की आवाज़) घबड़ाइए नहीं, गाड़ी इस पटरी पर नहीं आ रही है, इधर का सिगनल झुका ही नहीं है....यहाँ भी नहीं ! ओह, क्या भाग्य की विडम्बना है । राष्ट्रसम्राट जो सारे देश के मालिक हैं, हम सब जिनकी प्रजा हैं....(झुककर) क्या बात है....लोहे की पटरियों से आपको डर लग रहा है, यहाँ इंजन आने का भय है....ओफ़, अपने ही देश में, अपने ही राष्ट्र-सम्राट को एक शांत, हरा-भरा, ज़मीन का चप्पा नहीं मिल पा रहा है ! कितने अभागे हैं हम, क्या थे और अब क्या हो गये हैं हम, आइए, आप आराम कीजिए । अब तो अफ़सरों को, नेताओं को, डाक्टरों को, इंजीनियरों को, स्वयंसेवकों को आने की आज्ञा

दीजिए । वे लोग आपको आकर पहचानें, दर्द और तकलीफ में भी आप कैसे सौम्य, शांत और गम्भीर बने रहते हैं, देखें....आइए, वहीं चलकर बैठिए, शायद गाड़ी आ जाए, मुझे खिड़की के पास वाली जगह मिल जाए....आइए....(राजेन्द्र और सीता धीरे धीरे असबाब के पास जाते हैं) आइए, आप बैठ रह विश्राम कीजिए, इतना परिश्रम आपको नाहक करना पड़ गया । मुझे आज पहली बार महसूस हुआ कि हमारा देश कितना गरीब है, कितना साधनविहीन है, कितना दूसरे देशों पर आश्रित है, कितना आक्रान्त है कि आपको, देश के प्रथम नागरिक को, ज़मीन का एक हरा-भरा चप्पा न मिल सका जहाँ सरकार का सबसे अधिक संरक्षण है, सबसे अधिक व्यय है, सबसे अधिक ऊँचे अफ़सर हैं, सबसे अधिक....(एक आवारा आकर असबाब के ठीक पीछे खड़ा हो जाता है) राजेन्द्र, इनसे कह दो कि सिर पर न खड़े हों, चाचा जी को परेशानी महसूस हो रही है....

राजेन्द्र : (आवारा से) आप मेरी पत्नी के चाचा जी के सिर पर से हट जाइए ।

आवारा : मैं नहीं हटूँगा ।

सीता : इनसे कह दो कि नहीं हटेंगे तो टेसन मास्टर, उप टेसन मास्टर, टिकटबाबू, अभियन्ता, ज़िला अभियन्ता, सिपाही, उप सिपाही आदि को बुलवा कर इन्हें हटने पर मजबूर कर देंगे ।

राजेन्द्र : अगर आप नहीं हटेंगे तो अभियन्ता (सिर पर उँगली रखता है जैसे याद करने की कोशिश कर रहा हो) आय-कर अफ़सर, अपनी पत्नी के पिताजी आदि को बुलवा कर....

आवारा : मुझे यहाँ से कोई नहीं हटा सकता । यहाँ सब बराबर हैं और ज़मीन पर कहीं किसी का नाम नहीं लिखा हुआ है ।

सीता : जब टेसन पर हम जैसे चाहें वैसे नहीं बैठ पा रहे हैं तब गाड़ी में खिड़की के पास....राजेन्द्र, इनको ज़रा अलग ले जाकर बात कर लो, मेरे पिताजी होते तो.... आप तो चाचा जी जानते ही हैं (राजेन्द्र हाथ पकड़ कर आवारा को पीछे ले जाता है) मेरे पिता जी कितना लिहाज़ करते थे हर ऐरे-ग़ैरे का, हर बातचीत का, हर आवाज़ का, मेरी हर इच्छा का । उन्हें अगर मालूम हो जाए कि मैं खिड़की के पास बैठना चाहती हूँ तो....क्या हुआ मैं, चुप रहूँ, आपको फिर नींद आ रही है, आप पूजा करना चाह रहे हैं, आप अपने अन्दर की आवाज़ सुनना चाह रहे हैं....ठीक है, ठीक है....आप सुनिए, मेरे बड़े भाग्य....(चारों तरफ़ देखकर) सब शान्त हैं....(इंजन की सीटी) अन्दर की आवाज़ सुनिए....(इंजनों की आवाज़ें) । (सीता भी नीचे बैठ आँखें मूंद लेती है ।)

राजेन्द्र : यहाँ आप न खड़े हों तो अच्छा है । मेरी पत्नी मुझसे नाराज़ होगी । मैं उससे और उसके पिता जी से बहुत डरता हूँ ।

आवारा : मैं भी किसी से डरना चाहता हूँ । अफ़सरों से नहीं, किसी अपने से । पर इस संसार में मेरा कोई नहीं है । मैं हर ऐसे आदमी से ईर्ष्या करता हूँ (आगे बढ़ता है, राजेन्द्र सहम कर पीछे हटता है) जिसके पास अपने लोग हैं जिनसे वह डर सकता है । मैं तुमसे ईर्ष्या करता हूँ (और आगे बढ़ता है) मैं तुम्हारा दुश्मन हूँ

(राजेन्द्र और पीछे हटता है) । खैर, (ज़रा हँस कर) छोड़ो इन झगड़ों को । बताओ, तुम क्या करते हो ?

राजेन्द्र : (तन कर) मैं कहानियाँ लिखता हूँ ।

आवारा : वाह, क्या तुम मेरी कहानी लिख सकते हो ?

राजेन्द्र : क्यों नहीं, मुझे अभी तक कोई मिला ही नहीं जो कहे कि मेरी कहानी लिखो । ज्यादातर लोग यही चाहते हैं कि उनकी कहानी न लिखूँ, उनकी बातों को न खोलूँ । जब कभी किसी कहानी में अपनी पत्नी के बारे में या उसके पिता जी के बारे में कुछ लिख देता हूँ तो वह नाराज़ हो जाती है । ऐसा लगता है कि सत्य से सब डरते हैं । इसीलिए मेरी पत्नी हर कोशिश करती है कि मैं कहानीकार के बजाय पत्रकार हो जाऊँ तो अच्छा है....पर मैं मानने वाला नहीं हूँ....

आवारा : (राजेन्द्र की पीठ ठोक कर) शाबाश, तुम मध्यवर्ग के पहले आदमी मिले हो जिसमें आत्मसम्मान कुछ बाक़ी बचा है....वरना तो सब छोटी-छोटी बातों में इतना उलझ गये हैं....अच्छा तुम साइकिल तो नहीं चढ़ते हो ?

राजेन्द्र : हाँ, चढ़ता तो हूँ ।

आवारा : तब तुम क्रान्ति नहीं कर सकते ! साइकिल चढ़ता हुआ देश डरपोक और पिछड़ा हुआ देश होता है । तुम साइकिल चढ़ना छोड़ दो ! अगर यह वायदा करो तो मैं वहाँ पर नहीं खड़ा होऊँगा, वरना....

राजेन्द्र : नहीं, नहीं, मैं साइकिल चढ़ना नहीं छोड़ सकता । मैंने तीन साल तक पैसे बचा-बचा कर अभी नयी साइकिल खरीदी है, और मेरी माली हालत ऐसी नहीं है....

आवारा : अच्छा, साइकिल रहने दो । बताओ क्या तुम्हारे पास ट्रांजिस्टर है ?

राजेन्द्र : (खुश हो कर) वह रखा है । (असबाब की ओर इशारा करता है) लाकर दिखलाऊँ । पिछले साल लिया था । लिया क्या, एक लाटरी के टिकट पर मिल गया था ।

आवारा : क्या तुम इस ट्रांजिस्टर को (पटरियाँ दिखा कर) इन पटरियों पर फेंक सकते हो जिससे इंजन के पहियों से दब कर वह चकनाचूर हो जाए....

राजेन्द्र : नहीं, ऐसा मैं नहीं कर सकता । (अनन्त की ओर देख कर) किसी न किसी दिन मैं मशहूर कहानीकार हो जाऊँगा । तब राष्ट्रसम्राट सम्मानपूर्वक मुझे रेडियो पर अपनी कहानी पढ़ने के लिए बुलाएँगे । तब मैं चाहूँगा कि मेरी पत्नी ट्रांजिस्टर पर मेरी कहानी मेरी ज़बानी सुने और जाने कि मैं कौन हूँ....

आवारा : तुम बस अपनी पत्नी पर अपनी महानता का सिक्का जमाना चाहते हो....तुम इतने निकम्मे हो....

राजेन्द्र : ऐसी बातें करने का तुम्हें कोई अधिकार नहीं है (बाँहें चढ़ाने का अभिनय करता है) !

आवारा : (एक चाकू निकाल कर आगे बढ़ता है) अरे, बीबी के पले कीड़े तेरी इतनी मजाल....

राजेन्द्र : (सहमा-सा पीछे हटता है) यह क्या कर रहे हो, यह क्या....

आवारा : घबड़ाओ नहीं, मैं तुम जैसे मरे को नहीं मारूँगा । (चाकू बन्द करके) लेकिन हो बड़े चालबाज़ (हँसता है) !

राजेन्द्र : मैंने कुछ नहीं किया (घबड़ाहट बाक़ी है) !

आवारा : कुछ नहीं किया ?

राजेन्द्र : (नहीं का सिर हिलाता है ।)

आवारा : मौक़ा देखकर राष्ट्रसम्राट को अपनी बीबी का चाचा किसने बनवा लिया ? बताओ, तुमने नहीं बनवाया ?
....हो यार तेज़....

राजेन्द्र : इसके क्या माने, मैंने कुछ नहीं किया, मैं तो जानता ही नहीं था, वह तो सीता....

आवारा : यह सब मुझे न समझाओ । तुम भगवान् में विश्वास नहीं करते तब यही सीता तुम्हारे घर में सत्यनारायण की कथा कहलवाती है, तुम कह देते हो मैं नहीं जानता तुम कहानी की दुनिया में डूबे रहते हो तब सीता ट्रांजिस्टर और रेफ्रिजरेटर खरीद लाती है, तुम कहते हो मैं नहीं जानता । तुम साले चुप खड़े रहते हो, तुम्हारी सीता राष्ट्रसम्राट को चाचा बना लेती है और तुम कहते हो मैं नहीं जानता । तुम्हारी सादगी पर तो मर-मिटने को जी चाहता है । जिस देश के कहानीकार तुम जैसे अनजान होंगे उस देश की क्या दुर्दशा होगी, सोचकर मुझ जैसे बदमाश के भी रोंगटे खड़े हो जा रहे हैं । एक बार मुझे भी डर का एहसास हो रहा है । जो पुलिस, अफ़सर, मंत्री, राष्ट्रसम्राट नहीं करवा पाये, वह तुम्हारी सादगी ने कर दिया । मैं तुम्हारा बहुत अहसानमन्द हूँ । (हाथ जोड़ता है, राजेन्द्र पीछे हटता है ।)....अब तुम अपना भला चाहते हो तो यहाँ से भाग जाओ । जाओ !....बहला कर अपनी बीबी को ले जाओ....यहाँ अब आग लगने ही वाली है (मंच पर दूर आग लगने का आभास होता है) ।

राजेन्द्र : (सीता के पास जाकर और उसे जगाकर) सीता, उठो चलो, अब लगता है गाड़ी आज नहीं आएगी । कल चलेंगे ।....कब तक यहाँ हम लोग बैठे रहेंगे....

- सीता : जब तक चाचा जी जग नहीं जाते, जब तक उन्हें लेने टिकटबाबू, पुलिस, जुलूस....
- राजेन्द्र : वे लोग आते ही होंगे उन्हें लेने....हम लोगों को यहाँ से निकल चलना चाहिए....देखो, आग लग गयी है.... लगता है नेताओं का जुलूस आ रहा है....चलो, उठो चलो....
- सीता : लेकिन सामान....कोई कुली....उस पर चाचा जी....
- राजेन्द्र : कोई गहना तो बकस में नहीं है ?
- सीता : नहीं ।
- राजेन्द्र : मेरी साइकिल का पम्प तो इसमें नहीं है ?
- सीता : (नहीं का सिर हिलाती है !)
- राजेन्द्र : बकस पर नाम लिखा है मेरा ?
- सीता : मेरे पिता जी का नाम लिखा है, यह मुझे शादी में....
- राजेन्द्र : (सीता का हाथ पकड़ कर) कितने अच्छे और दूरदर्शी थे तुम्हारे पिताजी....(हाथ पकड़ कर सीता को ले जाता है, लौट कर ट्रान्जिस्टर उठा ले जाता है । मंच पर खाली सामान, आवारा और हल्की आग की बढ़ती रोशनी रह जाती है) ।
- आवारा : (सीता के सामान के पास आकर) उठो, राष्ट्रसम्राट जी, उठो, हाँ, अब ठीक है, आँखें मल लो । तुम्हारी भतीजी गयी । अब तुम्हारी सेवा के लिए मैं हूँ । हाँ, मैं । पहचाना मुझे । क्यों नहीं पहचानोगे । मेरे साथ चम्बल की घाटियों में घूमे हो ।....तुम सब मुझे अकेला छोड़ कर भाग गये थे । औरों से मैं निपट चुका, एक तुम रह गये थे । इधर-उधर देखने की कोशिश मत करो । कोई तुम्हारी मदद के लिए नहीं आएगा । वैसे, मुझसे डरने की ज़रूरत नहीं है....एक बात की

तारीफ़ करूँगा....छुपने की जगह तुमने अच्छी चुनी । देश के सम्राट का महल । वह भी राष्ट्रसम्राट के नकाब में ! एक बार तो मुझे भी धोखा हुआ । महा-पुरुष के भेष में डरपोक डाकू । सूझ अच्छी है । हमारे देश की प्रतिभा के अनुकूल है । मैं उस ठाठ-बाट में, उस ताम-झाम में कभी घुस न पाता । घुस भी जाता तो शक न करता । गलती की जो आज तुम अकेले निकल आये । ऊपर से जनेऊ चढ़ा कर इधर-उधर बैठे । मैं इत्तफ़ाक़ से देख रहा था । उस समय तुम्हारे बैठने की अदा अनोखी ही होती है । वैसे सभी की होती है । पर, तुम्हारी बिल्कुल अलग । इसीलिए, कभी खुले में नहीं जाना चाहिए । पर चम्बल में आदत जो तुम्हारी बिगड़ चुकी थी । आदमी सब आदतें बदल लेता है, पर यह नहीं बदल पाता । अब भी तुम्हें हरियाली चाहिए । यहाँ कहाँ है ! यहाँ पर पत्थर के कंकड़ हैं, लोहा है, कोयला है ।....तुम लोगों के चक्कर में पड़ने के पहले मैं बच्चों को भूगोल पढ़ाया करता था....खैर, छोड़ो बीती बातें....तुम्हें इस वाता-वरण में मारना अपनी चम्बल की घाटियों की याद के प्रति बेवफ़ाई करना होगा । मेरे सोचने के ढंग को तो तुम जानते ही हो । मेरे हर काम में एक तरीका होता है । मसलन, तुम्हें खतम करने के पहले दोस्ती के नाते तुम्हारी आखिरी इच्छा मुझे पूरी करनी होगी । अब रोक नहीं पा रहे हो न । तुम अपने मन के भाव को चेहरे पर आने से कभी रोक नहीं पाये । इस माने में हमेशा अनाड़ी रहे । अच्छा, बैठो, यहीं सामने, उठो, हाँ....ऐसे, (चल कर आगे आता है) हाँ,

यहीं पटरी पर, पत्थर की ज़मीन पर, कोयले की राख पर करो, (अब तक आग की लाल रोशनी तेज हो जाती है, चाकू निकालता है और इंजन की आवाजें आती हैं) करो नहीं तो यह चाकू अन्दर जाता है....शाबाश, आयी न, बहुत दूर तक जा रही है, भय सब करवाता है....चैन मिल रहा है न,....भय सब भुला देता है, समाधि की स्थिति में पहुँचा देता है और ऐसे में चैन मिले तो स्वर्ग ही स्वर्ग है। ओफ़् तुम कितने भाग्यवान हो, और करो, राष्ट्रसम्राट और करो....(खुलकर हँसता है) अब चलो, इधर-उधर मत देखो....सीधे.... (मंच के बाहर चला जाता है)।

(कुछ देर मंच पर आग की रोशनी और यात्रियों का सामान रहता है, कोई आवाज़ नहीं होती। फिर पास के लाउड-स्पीकर से आवाज़ : 'कुछ कारणों से यह निश्चय किया गया है कि सवारी गाड़ी पर यात्रियों का सामान लद कर जाएगा और पीछे-पीछे मालगाड़ी पर यात्री सफ़र करेंगे। स्थिति को देखते हुए यही उनके हित में है। कुलियों को आज्ञा दी जाती है कि वे गदहा-लाइन से सामान उठा कर एक नम्बर लाटफ़ारम पर खड़ी सवारी गाड़ी में भर दें। सब से ज्यादा सामान ढोने वाले को राष्ट्रकुली की उपाधि दी जाएगी। यात्री जहाँ हैं वहीं पड़े-पड़े इन्तज़ार करें।' दोनों कुली मंच पर आते हैं।)

देवीदयाल : अब कैसे काम चलेगा मुन्नीलाल ? आग अलग से लगी है....

मुन्नीलाल : लगने दो, हमें तो अपना काम करना है....

देवीदयाल : इतना सामान मुझसे नहीं उठेगा । ज़िन्दगी भर ढोऊँगा तब भी नहीं । क्या हमारी ज़िन्दगी....और लोग कहाँ हैं ?

मुन्नीलाल : इस समय हम दोनों ही काम पर हैं, जैसे भी हो....

देवीदयाल : जैसे भी हो, जैसे भी हो....कोई हद भी तो हो,....मैं बहुत थक गया हूँ मुन्नीलाल, मुझमें खड़े रहने की भी ताकत नहीं बची है....

मुन्नीलाल : घबड़ाओ नहीं तुम आराम कर लो, मैं अकेले ही सब ढो दूँगा । लो, तुम यहाँ लेट जाओ ! (राजेन्द्र सीता के सामान पर लाकर देवीदयाल को लिटा देता है) तुम काँप रहे हो, अरे, तुम्हें तो ज्वर है, लो यह ओढ़ लो ! (अपनी पगड़ी उतार कर, फटकार कर, उढ़ा देता है) ।

(आग की रोशनी और तेज़ हो जाती है । मुन्नीलाल एक बक्स और बिस्तर उठा कर धीरे-धीरे मंच के बाहर जाता है । पर्दा गिरता है ।)

अपने देश में

[१]

(विश्वविद्यालय की इमारत के एक भाग में एक विद्यार्थी, उदयभानु माला पहने बैठा भूख-हड़ताल कर रहा है। उसके बगल में अंग्रेजी में लिखी पट्टी लगी है। जिस पर गलत हिज्जे में 'हिंजर स्ट्राइक' लिखा है। कुछ स्टूल इधर-उधर पड़े हैं। सामने कुछ सीढ़ियाँ हैं। दो विद्यार्थी सामने की ओर पुस्तक लिये बैठे हैं, एक बायीं ओर दूसरा दायीं ओर। एक का नाम नायडू है, दूसरे का श्रीधर।)

श्रीधर : (सामने की ओर देखते हुए, बिना हिले-डुले) मैं श्रीधर हूँ। मैं चौक में रहता हूँ। रोज सबेरे देर तक खाट पर पड़ा रहता हूँ। माँ की पहली आवाज 'जग गया कि नहीं' पर आँखें खोलता हूँ, दूसरी आवाज 'धूप निकल आयी पर निगोड़ा उठा नहीं' पर उँगलियाँ चटखाता हूँ, और तीसरी आवाज 'आज इसको दिन भर पड़ा सोने दो, जो उठाए उसको बर्र काटे' पर उठ जाता हूँ। झोला लटका कर तरकारी लाता हूँ। दस बजे रोटी खाकर किताबें लटका यहाँ आता हूँ।

श्रीधर : (नायडू का पक्ष लेते हुए) जहाँ-जहाँ भारत की भूमि है वहाँ-वहाँ इन्क़लाब की आवाज़ लगाने से कोई किसी को नहीं रोक सकता । (नायडू से) तुम्हारा केरल भारत में है न ?

नायडू : (जोर से हाँ का सिर हिलाना है ।)

श्रीधर : (शान से वाष्ण्य और रानाडे को देखते हुए) अब बोलो !

वाष्ण्य : (वापस अपनी जगह पर जाते हुए) अब बोलो क्या ?

रानाडे : (वापस अपनी जगह जाते हुए बड़बड़ाता है) केरल भारत में है, गुजरात भारत में है, उड़ीसा भारत में है, बंगाल और पंजाब भारत में भारत न हो गया एक सराय है ।

वाष्ण्य : (दोनों हथेलियाँ घुटनों पर टिकाकर) सराय नहीं, अशोक होटल है । (खड़ा होकर, एक ओर जाकर अनन्त की ओर देखने लगता है ।)

श्रीधर : (बीच में आकर, पैर पटक कर) न सराय है, न होटल है, भारत एक देश है । (चुनौती भरी दृष्टि से चारों ओर देखता है ।)

नायडू : (प्रसन्न होकर अपनी जगह पर बैठ जाता है ।)

रानाडे : (एक पैर खुजलाते हुए) तुम्हें कैसे मालूम ?

श्रीधर : (आत्मविश्वास खोते हुए) मुझे कैसे मालूम ?

वाष्ण्य : इन्होंने हेलिकाप्टर से उड़कर देखा है ! (सब मुदित होते हैं, तनाव कम हो जाता है ।)

श्रीधर : (चिढ़कर और आत्मविश्वास वापिस लाकर) मुझे मालूम है । मैंने पढ़ा है (सब हँसते हैं) । मैंने भूगोल लिया है (सब एक दूसरे को देखकर मुस्कराते हैं ।) मेरा पूर्ण विश्वास है कि इस देश में इतिहास हटा कर सबको भूगोल देनी चाहिए । आज के युग में....

- रानाडे : (श्रीधर को इशारे से चुप कराते हुए) बस हो गया, यार !
फिर वही भाषण देने की जरूरत नहीं है ।
- वाष्णेय : बोलने दो भाई, मंत्री बनेंगे, इनके चाचा की खाहिश है ।
- श्रीधर : (अपनी जगह वापस जाते हुए) मैं नाहक यहाँ आया ।
(दार्शनिक अन्दाज़ में) भाषा भाषा नहीं रही, भाषण बन गयी । मैं मैं नहीं रहा, मंत्री बन गया । देश देश नहीं रहा, होटल बन गया । क्या कुछ ऐसा बचा है जो वही हो जो था, जो है ? (उत्तर की आशा में चारों ओर देखता है पर सब चुप रहते हैं, निराश होकर) मुझसे मतलब । अब इस देश में जो हो सो हो !
- रानाडे : (तनाव को तोड़ते हुए) अब अग्रवाल नहीं आएगा ।
साला बुत्ता पढ़ा गया ।
- वाष्णेय : न आये तो न आये । आओ, हम ही लोग कुछ करें ।
- नायडू : (यंत्रवत् हाथ उठाता है, और कुछ बोलने के लिए मुँह खोलता है) इन्क़लाब....
- श्रीधर : (लपककर अपने एक हाथ से नायडू का उठा हाथ पकड़ कर नीचे कर देता है और दूसरे हाथ से उसका मुँह बन्द कर देता है । फिर लौटकर अपनी जगह पर बैठ जाता है ।)
- रानाडे : विश्वविद्यालय के सुधार के बारे में हम लोग बात उठाएँ ।
- वाष्णेय : मैं समझता हूँ विश्वविद्यालय की स्वतंत्रता अक्षुण्ण बनी रहनी चाहिये । उस पर हमला हमारे विद्यार्थी होने पर हमला है । प्रान्तीय सरकार ने इस ओर जो गलत कदम....
- श्रीधर : (बीच में बोलते हुए) और हमारे यूनियन की स्वतंत्रता ?
- रानाडे : वह भी पूरी तरह से बनी रहनी चाहिए ।

- नायडू : स्वतन्त्रता बहुत अच्छी चीज है (आसमान की ओर देखने लगता है) ।
- वाष्णैय : स्वतन्त्रता की बात बड़ी है । अभी तो बहुत-सी इधर उधर की समस्याएँ उलझी पड़ी हैं । उपकुलपति की ही समस्या को लीजिए । पिछले उपकुलपति को हम लोग जाने से रोक नहीं पाये और इधर कई महीने से बिना उपकुलपति के ही विश्वविद्यालय चल रहा है । ऐसी हालत में क्या किया जा सकता है ?
- रानाडे : यदि मुझे उपकुलपति बना दिया जाये तो मैं सबसे पहले पूरे अहाते में हर फ़र्लांग पर ठंडे पानी के मिलने की व्यवस्था करवा दूँ । प्यास विचारों की दुश्मन होती है ।
- श्रीधर : मुझे मौक़ा मिले तो सारो इमारतों से मकड़ी के जाले और दरवाजों पर से गर्द साफ़ करवा दूँ । घास और मेंहदी ठीक से करवा कर क्यारियों में रंगबिरंगे फूल लगवा दूँ ।
- वाष्णैय : मैं तो एक इमारत बनवाऊँगा जिसमें रंगमंच हो, आरामदेह कुर्सियाँ हों, चित्र-प्रदर्शनी की सुविधा हो और किताबों-पत्रिकाओं से भरा एक कमरा हो जहाँ बे-रोकटोक आराम से बैठकर पढ़ सकें और खाली समय गुजार सकें ।
- नायडू : मैं तो उपकुलपति हो ही नहीं सकता (सब हँस पड़ते हैं) ।
- श्रीधर : यह हम लोग क्या बेकार की बात लेकर बैठ गये । कुछ ऐसा सुझाव दो कि जरा सनसनी खड़ी हो । नहीं तो आज का दिन तो गया ।
- रानाडे : क्यों न भूख-हड़ताल करी जाए !

(जो लड़का भूख-हड़ताल कर रहा था वह अब अपने को रोक नहीं पाता और अपनी जगह से चिल्ला उठता है—
‘और मैं क्या कर रहा हूँ?’ सब चौंक कर उसकी ओर देखने लगते हैं। फिर उसके चारों ओर एक घेरा बनाकर कुछ उकड़ूँ बैठ जाते हैं और कुछ खड़े रहते हैं। पूरे दृश्य के बीच एक दो करके विद्यार्थी आते रहते हैं। एक लड़का—सूरजमल—और एक लड़की—राधा—आकर सीढ़ियों पर बैठ जाते हैं और आपस में जब जोर-जोर से बातें नहीं करते तब बीच-बीच में हँसते और गुप-चुप बातें करते रहते हैं।)

श्रीधर : (भूख-हड़ताल करने वाले से) आपका शुभ नाम क्या है ?

राधा : (सूरजमल से) आपने अभी तक अपना नाम ही नहीं बताया।

उदयभानु : उदयभानु।

सूरजमल : सूरजमल।

श्रीधर : (अपने मित्रों से) नाम तो बड़ा अच्छा है।

राधा : (सूरजमल से) ओह, कितना सुरीला नाम है। ‘सूरत मेरी आँखें तेरी’ में देवानन्द ने अपना यही नाम रखा है। मैं तो इसे कभी भूल ही नहीं सकूँगी।

श्रीधर : उदयभानु जी, आप कहाँ से आये हैं ?

उदयभानु : बस्ती से।

श्रीधर : वाह, धाम भी अच्छा है। रानाडे, अब तुम पूछो।

रानाडे : उदयभानु जी, आप यहाँ क्या कर रहे हैं ?

सूरजमल : बम्बई में ।

उदयभानु : भूख-हड़ताल ।

राधा : (ऊँचे स्वर में, छत की ओर देखकर) ओह, आप कितने भाग्यवान हैं ?

उदयभानु : (चोंकता है ।)

सूरजमल : भाग्यवान कोई और होगा । मैं तो हमेशा असफल रहा हूँ ।

वाष्णैय : (उदयभानु से) कैसे मालूम कि आप भूख-हड़ताल कर रहे हैं ?

राधा : कैसे मानूँ कि आप हमेशा असफल रहे हैं ?

उदयभानु : (पट्टी की ओर इशारा करता है जिस पर अंग्रेजी में 'हिंजर-स्ट्राइक' लिखा है ।)

सूरजमल : (अपना माथा उँगलियों से छूकर) सब मेरे भाग्य में लिखा है ।

(श्रीधर, रानाडे आदि हिंजर-स्ट्राइक लिखी पट्टी की परिक्रमा करने लगते हैं । पट्टी को ठोक बजाकर देखते हैं । इसी बीच दो लड़कियाँ आकर उदयभानु को आदरपूर्वक नमस्कार करती हैं । एक लड़की 'हैन्डबैग' में से माला निकाल कर उदयभानु को पहनाती है । सूरजमल और राधा उठकर चले जाते हैं ।)

पहली लड़की : जी, हम लोग कुमुदनी संघ की ओर से आयी हैं । भूख-हड़ताल करने वालों की तीमारदारी पर एक गोष्ठी करना चाहती हैं ।

नायडू : (पट्टी के पास मुँह ले जाकर गौर से निरीक्षण करते हुए) इस पर तो भूख-हड़ताल कहीं नहीं लिखा है ।

- उदयभानु : (लड़कियों से) आप लोगों ने विषय तो बहुत आधुनिक चुना है । (नायडू से) 'हिंजर-स्ट्राइक' तो लिखा है ।
- दूसरी लड़की : हम लोग चाहती हैं कि आप लोग उस गोष्ठी का उद्घाटन करें । हम लोग आपको सहारा देकर, उठा कर, ले जाएँगी ।
- रानाडे : हम लोग अंग्रेजी में लिखी सूचना पट्टियों के खिलाफ हैं । ये गुलामी और पिछड़ेपन की प्रतीक हैं । हम इसे पढ़ने से इन्कार करते हैं । हम इसे यहाँ से हटा देंगे ।
- उदयभानु : (लड़कियों से) मैं यहाँ से हटकर नहीं जा सकता हूँ ।
(लड़कों से) आप लोग इसे उठा नहीं सकते हैं ।
- दोनों लड़कियाँ : हम लोग आपका बहुत स्वागत करेंगी और आपको असली फूलों की माला पहनाएँगी ।
- चारों लड़के : हम लोग इसे ले जाएँगे और जला देंगे ।
- उदयभानु : (घबरा कर लड़कियों से) आप लोग इसे (पट्टी दिखाकर) ले जाएँगी और माला पहनाएँगी । (लड़कों से, अपनी ओर इशारा करके) आप लोग मुझे ले जाएँगे और जला देंगे ?
- दोनों लड़कियाँ : (उठते हुए) हम माला पहनाएँगे ।
- चारों लड़के : हाँ, हम जलाएँगे ।
- उदयभानु : (हाथ जोड़कर) आप लोग न माला पहनाइए, न जलाइए, शांतिपूर्वक भूख-हड़ताल होने दीजिए ।
- पहली लड़की : देखिए जी, निराश न करिएगा । इतनी जल्दी दूसरा भूख-हड़ताल करने वाला हम लोगों को कहाँ मिलेगा ? हम सब आप ही पर निर्भर रहेंगी ।
(नमस्ते करके दोनों लड़कियाँ चली जाती हैं ।)

- रानाडे : (उदयभानु से) शांति की धमकी हम लोगों को मत दीजिए । उदयभानु जी, याद रखिए, भूख-हड़ताल हम भी कर सकते हैं । (नायडू से) नायडू, इस पट्टी के नीचे बैठ जाओ और भूख-हड़ताल शुरू कर दो । (नायडू वहाँ बैठ जाना है ।)
- श्रीधर : हिन्दी के हित में नायडू के साथ एक हमारी तरफ का आदमी भी बैठना चाहिये ।
- वाष्णोय : क्यों ?
- श्रीधर : क्यों ! (सोचने की कोशिश करता है ।)
- वाष्णोय : हाँ, क्यों ?
- श्रीधर : (गर्दन हिलाकर जैसे उत्तर पा लिया हो) भारत में चार दिशाएँ हैं और उनको दो हिस्सों में बाँटा जा सकता है, दक्षिण और....
- वाष्णोय : यह आपका पक्षपात है । एक तो चार दिशाएँ भारत में ही नहीं सारी दुनिया में हैं और दूसरे चार दिशाओं को बाँटना ही है तो चार हिस्सों में बाँटा जाना चाहिए (बाकी लोग हाँ का सिर हिलाते हैं ।)
- श्रीधर : हाँ, लेकिन कोई भी विभाजन किसी लक्ष्य को सामने रखकर किया जाता है । इस समय....
- वाष्णोय : ऐसा लक्ष्य जो देश की दिशा का विभाजन करे, देश-द्रोही है ।
- श्रीधर : अगर भूगोल में मौसम के अनुसार हम विश्व को हिस्सों में बाँटे तो क्या गलत होगा ?
- वाष्णोय : हाँ, बिल्कुल गलत । एकता और समन्वय के खिलाफ है । ऐसा भूगोल मुर्दाबाद ।
- नायडू : (हाथ उठाकर) मुर्दाबाद ।

रानाडे : भई ! इस समय सवाल बिलकुल अलग है, उसमें दिशा, भूगोल....

वाष्णेय : कोई सवाल अलग नहीं होता । सब सवाल एक हैं । मैंने दर्शन लिया है ।

श्रीधर : लेकिन हिन्दी सब जगह नहीं बोली जाती जैसे पश्चिम हवाएँ पूरे प्रशान्त महासागर पर सब जगह नहीं चलतीं ।

वाष्णेय : जो कुछ भी बोला जाता है (एक-एक शब्द पर जोर देता है), वह क्या है ?

श्रीधर : भाषा

वाष्णेय : तब हम कह सकते हैं कि भाषा सब जगह बोली जाती है ।

श्रीधर : हाँ, बोली जाती है ।

वाष्णेय : हिन्दी भाषा है ।

श्रीधर : हाँ, है ।

वाष्णेय : इसलिए, हिन्दी सब जगह बोली जाती है ।

श्रीधर : (आत्मविश्वास खो बैठता है) यह....यह तो कोई बात नहीं हुई....यह तो एकदम गलत है, साफ़-साफ़ झूठ है ।

वाष्णेय : यह तर्क संगत है ।

श्रीधर : ऐसे तर्क पर लानत है ।

नायडू : (खड़े होकर) आप लोग संग्राम मत करिए । मैं अकेला ही भूख-हड़ताल कर लूँगा ।

श्रीधर : (नायडू से) धमकी देते हो ! (नायडू सहम कर बैठ जाता है) क्यों अकेले कर लोगे तुम, कोई लाट साहब हो । माला पहनने का लालची कहीं का ।

- रानाडे : अरे नाराज क्यों होते हो ! वह तो इसलिए कह रहा है कि तुम लोग एक हो जाओ ।
- श्रीधर : सवाल हमारे एक होने का नहीं, सिद्धान्त का है ।
- नायडू : अच्छा, जिससे सिद्धान्त एक हो जाये ।
- श्रीधर : सिद्धान्त एक नहीं हो सकते । मौसम एक सिद्धान्त अलग है और खनिज-पदार्थों के पाये जाने का सिद्धान्त अलग है । बन्दरगाह के पनपने का सिद्धान्त इन दोनों से अलग है....
- वाष्णैय : फिर इन सब सिद्धान्तों का भी एक सिद्धान्त है जो एक है । (एक उँगली उठाकर दिखाता है ।)
- श्रीधर : फिर वही लुंज पुंज तर्क !
- वाष्णैय : फिर वही गोल मटोल बात !
- श्रीधर : तुम लुंज हो ।
- वाष्णैय : तुम गोल हो !
- श्रीधर : तुम पुंज हो !
- वाष्णैय : तुम मटोल हो !
- श्रीधर : तुम लुंज-गोल हो !
- वाष्णैय : पुंज-मटोल हो !
- नायडू : (हाथ उठाकर) इन्क़लाब !
- रानाडे : (झगड़ा खत्म करने में सहायता देते हुये) जिन्दाबाद !
- नायडू : इन्क़लाब
- रानाडे और उदयभानु : } जिन्दाबाद !

(रानाडे वाष्णैय और श्रीधर के बीच में आकर, एक की कमर में हाथ डालकर और दूसरे का हाथ पकड़ कर, बाहर ले जाता है । मंच पर उदयभानु और नायडू रह जाते हैं ।)

नायडू : (उदयभानु की ओर देखकर, फिर सामने देखकर, कन्धे उचकाता है ।)

उदयभानु : (नायडू की ओर देखकर, फिर सामने देखकर कन्धे उचकाता है ।)

नायडू : विचित्र हाल है इस दुनिया का ।

उदयभानु : (अनुभव से बोलते हुए) दो दिन के बाद और भी अजीब लगेगा ।

नायडू : भूखे रहने से पदार्थों का असली रूप दीखने लगता है ।

उदयभानु : छोटी-छोटी चीजों में उलझी हुई दृष्टि उठकर विस्तृत संसार का सिंहावलोकन करने लगती है ।

(रानाडे वापिस आकर चुपचाप खोया सा सीढ़ियों पर बैठ जाता है । एक आदमी सूट पहने, हाथ में बैग लटकाये, सीढ़ियों पर चढ़ता है । रानाडे उसे इशारे से रोककर पूछता है—‘आप कौन हैं ?’ वह कहता है—‘भूख-हड़तालियों का विशेष बीमा एजेण्ट ।’ रानाडे उसे इशारे से ऊपर जाने की आज्ञा दे देता है । वह ऊपर जाकर ललचायी दृष्टि से दोनों को देखते हुए एक ओर खड़ा हो जाता है और अपने बैग से कुछ फार्म निकाल कर भरता है ।)

नायडू : सब कुछ एक पीले सुनहले प्रकाश में नहाया हुआ लगता है ।

उदयभानु : जहाँ मृत्यु भटक नहीं सकती ।

(डाक्टर की वेशभूषा में एक लड़का सीढ़ियों पर चढ़ता है । रानाडे हाथ फैला

कर उसे रोकता है और पूछता है—
 ‘आप कौन हैं?’ वह कहता है—‘डाक्टरी
 पढ़ रहा हूँ, भूख-हड़तालियों के लिए
 खास दवाओं पर खोज कार्य कर रहा
 हूँ । सुना यहाँ दो केस हैं तो चला
 आया ।’ रानाडे उसे भी जाने देता है ।
 ऊपर पहुँच कर दोनों भूख-हड़तालियों
 की एक-एक आँख फैलाकर देखता है ।
 दोनों बार सिर हिलाकर हँसता है जैसे
 जो लक्षण ढूँढ़ रहा हो वह मिल गया
 हो । सुई लगाने की तैयारी करता है ।)

नायडू : लगता है जैसे हम किसी और लोक के वासी हों ।

उदयभानु : जहाँ न कोई रोग है, न कोई यातना है ।

(एक पत्रकार जल्दी-जल्दी, रानाडे के
 टोकने के बावजूद, ऊपर चढ़ जाता है ।
 ऊपर पहुँचकर उदयभानु का सिर ऊपर
 की ओर उठा देता है और नायडू का
 सिर नीचे झुका देता है । अलग हटकर
 मुआयना करता है ।)

नायडू : एक विशाल शांति महसूस करता है ।

उदयभानु : जैसे हम देश-काल के परे हों ।

(पत्रकार घुटने टेककर छायाचित्र लेने का
 प्रयत्न करता है । दूर से ‘इन्क़लाब-
 जिन्दाबाद’ की आवाजे पास आती लगती
 हैं । कुछ नारे इस प्रकार हैं—‘उदयभानु
 को, मरने नहीं देंगे’, ‘नायडू की जान
 बचाकर रहेंगे,’ आदि । पर्दा ।)

[२]

(रजिस्ट्रार का कमरा । रजिस्ट्रार श्री पंत, जिन्हें उनकी उम्र के लोग ठाकुर साहब कहते हैं, बैठे हैं । उम्र ५० वर्ष से ऊपर है । दरवाजे पर चिक पड़ी है । चिक के पीछे से आवाजें आती हैं । कोई अन्दर आने की कोशिश कर रहा है और चपरासी रोक रहा है ।)

पंत : मुझे रजिस्ट्रार से अभी मिलना है ।

चपरासी : जरूर मिलें साहब, लेकिन रजिस्ट्रार में पहले दस्तखत कर दें ।

पंत : मुझे दस्तखत-वस्तखत करने की फुरसत नहीं है ।

चपरासी : हम तो साहब इसी काम के लिए यहाँ बैठाये गये हैं कि बिना दस्तखत के....

पंत : दस्तखत-वस्तखत करता है, जानता है, हम कौन हैं ।

चपरासी : हाँ साहब, आप ही की तो तनख्वाह रुक गयी रही । चिचिया-चिचिया कर हमारे साहब की नाक में दम....

पंत : चुप रहो । मैं दर्शन-शास्त्र का प्रोफेसर हूँ । जब मान-वीय मूल्यों का प्रश्न....

चपरासी : जरूर होंगे साहब । पर हमारे साहब के दरवज्जे सब बरोबर हैं ।

पंत : (ऊँचे स्वर में) तुम्हारे साहब । एक क्लर्क है, क्लर्क !
(रजिस्ट्रार अन्तिम शब्द 'क्लर्क' पर तन कर ठोढ़ी उठाकर बैठ जाते हैं । पन्त चिक उठाकर अन्दर आ जाते हैं । बाहर से चपरासी के बड़बड़ाने की आवाज आती है—दस्तखत करना बड़ा मुश्किल

काम है । साहब कह दें तो घै कर अंगूठा लगवा लिया करी ।)

रजिस्ट्रार : (मुसकराहट लाकर) आइए पंत जी । बैठिए ।

पंत : कहिए ठाकुर साहब । अच्छी तरह से तो हैं । (बैठ कर) आप न सम्हालें तो यह विश्वविद्यालय कल ही बैठ जाए । आप ही के बूते पर चल रहा है ।

रजिस्ट्रार : (लजाते हुए) भई, अपने से पूरी कोशिश करता हूँ । कहिए, आपके लिए क्या कर सकता हूँ ?

पंत : अरे वही, पिछली परीक्षा के दो चेक मिल गये हैं, पर तीसरा अभी तक नहीं पहुँचा । इधर से निकल रहा था, सोच आपको याद दिला दूँ और दर्शन भी कर लूँ ।

रजिस्ट्रार : कैसी बातें करते हैं पन्त जी, दर्शन तो आप ही देते हैं (पन्त हँसते हैं)....कितने का था ?

पंत : पचास रुपये का ।

रजिस्ट्रार : बस ! (घन्टी बजाते हैं ।)

पंत : क्या करूँ, पिछली विद्या-परिषद् में मैंने परीक्षा का पारिश्रमिक बढ़ाने की बात उठायी थी पर अभी तक कुछ हुआ नहीं, बस एक कमेटी अलबत्ता बन गयी । आप तो उसमें उपस्थित थे ?

रजिस्ट्रार : याद नहीं पड़ रहा । शायद उस समय मैं कहीं उठ कर चला गया था । खैर....(अन्दर आये चपरासी से) जरा वर्मा जी को भेज दो ।

पंत : मैंने तो यही कहा था कि एक कापी जाँचने के लिए जितना आज से पचास वर्ष पहले मिलता था, उतना ही आज भी मिलता है । ऊपर से इस बीच इन नव-युवकों के मारे सब पाठ्यक्रम बदल गये । मेरी उम्र

के लोगों के लिए यह काम अब कठिन हो गया है ।
इसके अलावा जब सब जगह मूल्य बदले हैं तब इसमें
क्यों नहीं ?

(वर्मा भन्दर आकर खड़ा हो जाता है ।)

रजिस्ट्रार : यह तो आप लोग जैसा तय करिये । मुझे क्या ?

पंत : और कुछ नहीं तो कम से कम जो लोग तेईस साल
से कापी जाँचते आ रहे हैं और जिन्होंने अभी यह
काम शुरू किया है उनमें कुछ फर्क तो होना चाहिए....

वर्मा : मगर इसमें तनख्वाह की तरह सालाना बढ़ती तो दी
नहीं जा सकती ।

पंत : (मेज पर मुक्का मारते हुए जिसके साथ वर्मा का सिर भी
झटके से झुकता है) क्यों नहीं ?

रजिस्ट्रार : जरा सोचिए पन्त जी, हमारा काम कितना बढ़
जायगा ?

पंत : (पसीज कर) कैसी बातें करते हैं ठाकुर साहब । भला
आपका काम बढ़ा कर मैं अपनी कमाई करूँगा ।
ना ना ।

(चिक के पार से फिर दस्तख्त के बारे में
बातचीत सुनाई देती है । जीव-विज्ञान के
रीडर डा० जयसवाल प्रवेश करते हैं ।)

जयसवाल : कहो भाई, किसका काम बढ़ रहा है, किसकी कमाई
हो रही है ?

रजिस्ट्रार : आइए डा० जयसवाल, कहिए खूब मेंढक कट रहे हैं ?

जयसवाल : अरे कहाँ, ठाकुर साहब ! अब तो बस खुद कट रहे
हैं । इस देश में जो आदमी कुछ नहीं करता वह सिंहा-
सन पर बैठता है और जो कुछ करता है वही कटता
है ।

रजिस्ट्रार : (वर्मा से) देखिए, वह भूख-हड़ताल वाली फाइल तो निकाल लाइए। उसके लिए एक कमेटी बनानी थी न, पन्त जी और डा० जयसवाल मौजूद हैं। इनके नाम लिख लीजिए और पहली बैठक हम लोग अभी कर डालें। पता नहीं कब लड़के आ धमकें। (वर्मा चला जाता है।)

जयसवाल : कैसी कमेटी ?

(दो युवा अध्यापक, गुप्ता और सक्सेना, अन्दर आते हैं। सबको नमस्कार करके बैठ जाते हैं।)

रजिस्ट्रार : कहिए गुप्ता जी, आपके नव अध्यापक संघ ने फिर कोई नई माँगें रखी हैं क्या ?

गुप्ता : (जरा तनकर और आवाज गम्भीर बनाकर) श्रीपत जी, आप रजिस्ट्रार हैं और इस समय उपकुलपति भी। माँगें रखने के लिए तो प्रोफेसरान काफी हैं (पंत और जयसवाल बैठने का ढंग बदलते हैं) जिनके बीच आप ठाकुर साहब कहलाते हैं (रजिस्ट्रार कुछ तन जाते हैं) हम युवा अध्यापक तो एक आदर्श के लिए इकट्ठे हुए हैं, माँगों के लिए नहीं (पंत, जयसवाल और रजिस्ट्रार मुसकरा कर आराम से बैठ जाते हैं)।

सक्सेना : बढ़ते अन्याय का विरोध करना हमारा नैतिक धर्म है। कुछ लोगों ने बपौती गुट बना रखा है और मन-माना कर रहे हैं। अभी पिछली कार्यकारणी समिति की बैठक में डा० श्रीवास्तव खुद अपनी लड़की का पक्ष लेकर बोले और सब नियमों का उल्लंघन करके उन्होंने उसे अंग्रेजी विभाग में प्राध्यापिका नियुक्त करवा कर ही दम लिया। इस बपौती गुट की ताना-

शाही के खिलाफ न्याय, सत्य और लोकतन्त्रीकरण को स्थापित करने का कठिन कार्य हम लोगों ने उठाया है और इसमें आपका सहयोग लेने हम लोग इस समय आपके पास आये हैं।

रजिस्ट्रार : क्यों नहीं, क्यों नहीं। आज्ञा दीजिए।

गुप्ता : हम लोगों को खबर लगी है कि प्रोफेसरों की ओर से यह बात उठायी जा रही है कि परीक्षा की उत्तर पुस्तकें जाँचने की दर में वृद्धि की जाय। इसमें हमें कोई आपत्ति नहीं है। पर चूँकि प्रोफेसरान ज्यादा उत्तर पुस्तकें जाँचते हैं, इस कदम से उनके और हमारे बीच का अन्तर और बढ़ जायगा। यह अन्याय होगा। इससे बचने के लिए हमारा सुझाव है कि पारिश्रमिक पर महँगाई देने की व्यवस्था की जाय। महँगाई की दर कम आय पर ज्यादा रखी जाय और उत्तर-पुस्तकों से अधिक आय पर कम या शून्य, तभी पारिश्रमिक का समाजवादी बँटवारा हो सकेगा।

पंत : हमें इस सुझाव को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है यदि पारिश्रमिक की दर परीक्षक की तनख्वाह के अनुपात में रखी जाय। प्राध्यापक को एक उत्तर पुस्तक का सवा रुपया, रीडर को दो रुपया, और प्रोफेसर को तीन रुपया मिले। क्यों डाक्टर जयसवाल आपको यह मंजूर है ?

जयसवाल : (हाँ का सिर हिलाते हैं।)

रजिस्ट्रार : आप लोगों के सुझाव चाहे जितना अच्छा हो पर यह विश्वविद्यालय की माली हालत को नज़र अन्दाज करके रखे गये हैं। इस दीवालियेपन की स्थिति में इसके लिए पैसा कहाँ से आयेगा ? इसके बारे में भी

कोई सोचेगा, या सब अपने-अपने....

पंत : अरे, ठाकुर साहब ! थोड़ा परीक्षा-शुल्क बढ़ा दीजिए, कुछ घटा-बढ़ा दीजिए । विश्वविद्यालय की माली हालत तो सुधरने से रही ।

सक्सेना : विद्यार्थियों से परीक्षा शुल्क बढ़ा कर वसूलने की अगर कोशिश की गयी तो हम इसका विरोध करेंगे । यह समाजवादी दृष्टि के बिल्कुल विपरीत है ।

(बाहर से, 'इन्कलाब जिन्दाबाद' की आवाजें आती हैं । पंत और जयसवाल यह कहते हुए उठ जाते हैं कि हम लोग देर से आये हुए हैं, चलें । रजिस्ट्रार—खिड़की के पास जाकर बाहर देखते हैं । तभी जोर का नारा लगता है—'रजिस्ट्रार, हमारी मांगें पूरी हों !')

गुप्ता : (रजिस्ट्रार से) श्रीपत जी, ये लड़के हड़ताल क्यों कर रहे हैं ?

रजिस्ट्रार : (आकर बैठते हुए) यह तो आप लोगों को मालूम होना चाहिए । आप लोग उन्हें पढ़ाते लिखाते हैं, रोज उनके सम्पर्क में आते हैं और उनके निर्देशक हैं ।

सक्सेना : यदि हम अध्यापक ही पथ-प्रदर्शन करते होते तो यह नौबत ही क्यों आती । फिर भी....

रजिस्ट्रार : दो भूख-हड़तालें साथ-साथ चल रही हैं । एक उप-कुलपति की नियुक्ति को लेकर और दूसरी भाषा के प्रश्न को लेकर । पता नहीं, कौन-सा दल आ रहा है....

(पाँच-छह विद्यार्थी नारे लगाते हुए अंदर घुस आते हैं ।)

पहला विद्यार्थी : वहाँ हमारे दो भाइयों की जानें जा रही हैं और यहाँ आप आराम से सिंहासन पर बैठे मौज कर रहे हैं ।

रजिस्ट्रार : जरा शांत होकर बोलिए, तब तो बातचीत....

दूसरा विद्यार्थी : अब बातचीत के लिए समय नहीं है, हम हरकत से काम लेंगे । इन्कलाब ! (सब विद्यार्थी चिल्लाते हैं—‘जिन्दाबाद’)

गुप्ता : (खड़े होकर) आप लोग रजिस्ट्रार के सामने अपनी माँगें तो रखें, यह तो कोई तरीका नहीं है ।

तीसरा विद्यार्थी : गुप्ता जी, यह जनरल इंगलिश का क्लास नहीं है, जो आप हम पर रोव गाँठ लें । यह जिन्दगी और मौत का सवाल है । (हाथ उठाकर) अंग्रेजी....

शेष विद्यार्थी : अब नहीं पढ़ेंगे, नहीं पढ़ेंगे !

(गुप्ता जी बैठ जाते हैं । एक लीडर लगता हुआ विद्यार्थी अन्दर आता है । वर्मा भी आकर रजिस्ट्रार के पास खड़ा हो जाता है ।)

लीडर : क्या रजिस्ट्रार हमारी बातें मानने से मना कर रहे हैं ?

रजिस्ट्रार : मानूंगा बाद में, पहले सुनूँ तो ।

लीडर : कोई आप जहाँपनहाँ नहीं हैं कि हम कहें और आप सुनें । कोई हम भीख माँगने नहीं आये हैं । हम अपने अधिकारों के लिए लड़ रहे हैं । आप क्या, आपके बाप भी हमें नहीं रोक सकते ।

सक्सेना : मेरी उपस्थिति में यहाँ पर इस तरह की बातें नहीं होंगी । पढ़े-लिखे व्यक्तियों की तरह....

लीडर : आप कौन हैं ?

सक्सेना : मैं डाक्टर सक्सेना हूँ ।

लोडर : (एक विद्यार्थी से) तुम इन्हें पहचानते हो ? (वह नहीं का सिर हिलाता है ।) (दूसरे से) तुम ! (वह भी नहीं का सिर हिलाता है ।) हम लोग आपको (सक्सेना की ओर उँगली उठाकर) नहीं पहचानते । न जाने कैसे-कैसे लोग आकर इस विश्वविद्यालय में पलने लग गये हैं....

गुप्ता : (गुस्से में) तुम लोग बदतमीज हो गये हो ।

लोडर : (गुप्ता की उपेक्षा करके रजिस्ट्रार से) हाँ, तो रजिस्ट्रार साहब, हम लोगों को पता चला है कि सारी सत्ता पर अपनी गद्दी जमाये रखने के लिए आप किसी उपकुलपति की नियुक्ति नहीं होने दे रहे हैं—क्या यह सच है ? (बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये हुए) आप लोगों ने हमारे पुनीत विश्वविद्यालय को भ्रष्टाचार का घर बना रखा है । फीसें बढ़ा दी गयी हैं पर हम लोगों के आराम का कोई इन्तजाम नहीं है । आप लोग कुर्सी पर बैठे चपरासियों से पानी मँगा-मँगाकर पीते हैं और हम लोग लकड़ी की बेंचों पर ठुसठुसा कर बैठे प्यासे मरते हैं, खाली घंटों में धूप में घूमते हैं । हमारी पचीस माँगों में से एक भी....

रजिस्ट्रार : (आवाज ऊँची करके) मैं रजिस्ट्रार हूँ । न भाषण देता हूँ, न सुनता हूँ । जहाँ तक उपकुलपति की नियुक्ति का सवाल है, उसकी फाइल कुलपति के पास पहुँच गयी है (वर्मा हाँ का सिर हिलाता है) आज रात तक उत्तर आने की आशा है । आते ही मैं नये उपकुलपति को भार सौंप दूँगा । यह शेर की खाल ओढ़ने में मुझे आराम नहीं है । देखिए, आप ही सब जंगली जानवरों की तरह मेरे सिर पर खड़े हुए हैं....

लीडर : हमें जंगली जानवर कहने का फल आपको भुगतना पड़ेगा । आपने जो हमें नाम दिया है उसी के अनुकूल हम आचरण करेंगे । हम लोग इस कमरे को घेरकर बैठेंगे और ठीक रात के बारह बजे इसे जला देंगे अगर तब तक उपकुलपति के नियुक्त होने की खबर नहीं आयी । आओ साथियो ! बाहर चलो, इस दफ्तर को घेर लो । इन्कलाब ।

(सब नारे लगाते हुए बाहर चले जाते हैं और चपरासी को अन्दर ढकेल कर दरवाजा बाहर से बन्द कर देते हैं ।)

रजिस्ट्रार : (उठकर खिड़की के पास जाते हैं, बाहर झाँक कर) लगता है शाम हो गयी । दिवस का अवसान समीप था, गगन था कुछ लोहित हो चला....

सक्सेना : (घबराये स्वर में) अरे रजिस्ट्रार साहब, आपको कविता सूझ रही है, यहाँ जान का खतरा है । जल्दी से पुलिस को फोन कर दीजिए, वे ही इनको ठीक कर सकते हैं । अगर इन लोगों ने तार काट दिये तो....

रजिस्ट्रार : (आकर कुर्सी पर बैठते हुए, स्वप्निल स्वर में) मैंने एम० ए० हिन्दी साहित्य में किया था मुझे कविता पढ़ने का बहुत शौक था । वही आज काम आ रहा है । मैं अन्त्याक्षरी में भी भाग लिया करता था । मुसीबत में आदमी को अपना बचपन याद आने लगता है ।.... सक्सेना साहब, अपने विद्यार्थियों से घबरा रहे हैं ? विधि के विधान से मैं रजिस्ट्रार अवश्य बन गया पर मन से मैं अध्यापक ही हूँ । मुझे तो डर नहीं लग रहा है ।

(घंटा बजने की आवाज आती है ।)

गुप्ता : आखिरी घंटा बज गया । चपरासी मेरी साइकिल दफ्तर में बन्द करके चला जाएगा । ओफ़ किस मुसीबत में फँस गया ।

रजिस्ट्रार : (वर्मा से) यह क्या फ़ाइल लिये हुये हो ?

वर्मा : नये वेतन-क्रम में प्राध्यापकों के वेतन को बढ़ाने की फ़ाइल आपने आरम्भ कर दी थी, वही ले आया था ।

रजिस्ट्रार : अभी खत्म नहीं हुई (वर्मा नहीं का सिर हिलाता है) ? इसे खत्म करने को कपूर को दे दो । मैंने शुरू कर दी, यह क्या कम है । (सक्सेना से) सक्सेना जी, क्या भविष्य के बारे में आप कभी स्वप्न देखते हैं ? (बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये हुए) आप नहीं देख सकते । उसके लिए मन में यह दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि अन्त में सब ठीक हो जाएगा । यह विश्वास अब हममें से किसी में इस देश में नहीं रहा । अब तो लगता है कल आज से और बीतेगा । इसीलिए हम अभी, आज वर्तमान में ज्यादा फँसते जा रहे हैं । कल को न्यौछावर करके आज को वसूलने में लग गये हैं । बड़े से छोटे तक सब । इस आज को वसूलने का खाता हम भरते हैं—जो क्लर्क हैं । प्रोफ़ेसर पन्त ने बाहर खड़े होकर अभी मुझे 'क्लर्क' कहा था । मुझे गर्व है अपने क्लर्क होने पर । क्लर्क और कवि में बहुत-सी समानताएँ हैं ।

(पास ही से वाद्य-संगीत की ध्वनि आती मालूम पड़ती है ।)

वर्मा : यह संगीत डिप्लोमा का क्लास इतने पास में लगता है कि इस समय यहाँ काम करना मुश्किल हो जाता है । इसे यहाँ से हटवा दीजिए तो अच्छा है ।

रजिस्ट्रार : नहीं, इसे यहीं रहने दो । आजकल संगीत कहाँ सुनाई

देता है । जिधर देखो निरर्थक शब्द हैं, नारे हैं, मांगें हैं । संगीत सीखने के स्वर से मुझे बड़ा ठाढ़स बँधता है । समझता नहीं हूँ पर सुनता हूँ । सुनो !

(संगीत का स्वर तेज हो जाता है, पर्दा)

[३]

(कार्यकारिणी समिति की बैठक । उप-कुलपति, रजिस्ट्रार, दो क्लर्क और नौ सदस्य बैठे हैं । सब बूढ़े लगते हैं ।)

डा० जैन : (खड़े होकर) इससे पहले कि विश्वविद्यालय की इस सर्वोच्च कार्यकारिणी-समिति की कार्यवाही आरंभ हो, मैं इस समिति और इस विश्वविद्यालय के सबसे वरिष्ठ सदस्य होने के नाते, अन्य सदस्यों की ओर से और अपनी ओर से, अपने नये उपकुलपति श्री मुंशी दौलत राम का इस समिति में स्वागत करने का पुनीत और हर्षमय कार्य सम्पन्न करना चाहूँगा । आपने अपना जीवन एक साधारण सिपाही की हैसियत से आरम्भ किया था । उस समय उन्हें देखकर कोई नहीं कह सकता था कि एक दिन आप एक विश्वविद्यालय का मार्ग-दर्शन करेंगे । अपनी नेकी और कर्तव्य-परायणता के कारण आप जल्द ही दारोगा बना दिये गये । जब राष्ट्रीय चेतना की लहर सारे देश में व्याप गयी तब आपने अपने कर्तव्य और अपने देश प्रेम का अद्भुत समन्वय दिखाते हुये तमाम देशप्रेमियों को अनेक अवसरों पर बन्दी बनाया और फिर उनके साथसहृदयता-पूर्ण व्यवहार किया । आज़ादी मिलने के बाद देश में गाँजा भाँग के बढ़ते हुये ठगी-व्यापार को रोकने-थामने

का कठिन कार्य आपको सौंपा गया जिसे आपने अपूर्व सफलता के साथ निभाया। आपकी सच्चाई और आपके कार्यों को दृष्टि में रखते हुए आप हमारे परम-प्रिय प्रधानमन्त्री जी के अंग-रक्षक नियुक्त हुए। पिछले वर्ष वहाँ से आपने अवकाश ग्रहण किया। इस अवसर पर प्रधानमन्त्री ने अपने हाथ से अपनी घड़ी उतार कर आपको उपहार स्वरूप भेंट की थी। अपने लम्बे जीवन में आपने मनुष्य के चरित्र की गहरी पकड़ प्राप्त कर ली है। कहा जाता है कि—बालक मानव का पिता है। छोटी उम्र में ही चरित्र का निर्माण हो जाता है। आज विद्या की नहीं, चरित्र की समस्या हमारे विश्वविद्यालयों में प्रधान हो गयी है। अतः ऐसे ऐतिहासिक अवसर पर आपका उपकुलपति के रूप में नियुक्त होना हमारे देश के प्रधान मन्त्री तथा अन्य कर्णधारों की दूरदर्शिता और निर्भीक चिन्तन का द्योतक है। हम सब आपका हार्दिक स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि पक्ष, जाति, वर्ण आदि की सीमाओं से ऊपर उठकर आप न्यायपूर्ण ढंग से हमारे विश्वविख्यात विश्वविद्यालय का संचालन करेंगे।

(डा० जैन बैठ जाते हैं, तालियाँ बजती हैं।)

उपकुलपति : (खड़े होकर) डाक्टर जैन ने अभी जो बढ़िया बातें मेरी तारीफ में पेश करीं उनके लिए मैं उनका दिल से शुक्र-गुजार हूँ। इस जो नये मुहकमे की बागडोर मेरे हाथों सौंपी गयी है उसे मैं ढीली नहीं पड़ने दूँगा और हर मौके पर आपकी सलाह की तलाश करूँगा। आपकी मदद से इस इल्म के इलाके में भी अमन और चैन का

मौसम पैदा किया जा सकेगा, इसका मुझे पूरा भरोसा है । (रजिस्ट्रार कुछ कागज़ उपकुलपति को पकड़ा देते हैं । उन्हें उलट-पलट कर देखने के बाद) समिति की कार्यवाही शुरू करने के पहले मैं एक सुझाव रखना चाहूँगा और आशा करूँगा कि आप सब उसे मान लेंगे । अब तक अलग-अलग सदस्यों से जो मेरी बातें हुई हैं, उनसे लगता है कि समिति की बैठक में किसी मसले पर निर्णय लेते वक्त लोग आपस में इशारेबाजी करते हैं जिसकी वजह से हर सदस्य पूरी आजादी से अपने मन के मुताबिक अपनी राय नहीं दे पाता है । इससे गलत जोर पड़ता है और दलबन्दी बढ़ती है । इसे दुरुस्त करने के लिए मैंने तय किया है कि अब से सदस्य मेज की ओर पीठ करके बैठा करें । अगर आप लोगों को यह मंजूर हो तो....

एक सदस्य : (उठकर) यह आपका पहला सुझाव है अतः इस पर हम बहस नहीं करेंगे । मैं प्रस्तावित करता हूँ कि पाँच मिनट का अवकाश दिया जाए । इस बीच रजिस्ट्रार कुर्सियाँ घुमवा देने का इंतजाम करवा दें ।

(रजिस्ट्रार घंटी बजाते हैं । सब सदस्य उठकर इधर-उधर तीन-तीन की टुकड़ियों में बँट जाते हैं । एक चपरासी अन्दर आता है जिससे रजिस्ट्रार कुर्सियाँ घुमा देने को कहते हैं । वह चपरासी जाकर एक और चपरासी को बुला लाता है । दोनों मिल कर सदस्यों की नौ कुर्सियाँ घुमा देते हैं । दुबारा घंटी बजने पर चपरासी बाहर चले जाते हैं और सदस्य नये